2015-16

संस्कृति मंत्रालय भारत सरकार

आई.सी.एच.शोधकार्य फाइनल रिपोर्ट

विषय – कोंहरौही गाथा गायन परम्परा

शोधकर्ता

नरेंद्र बहादुर सिंह

पता - गोपालदास रोड साउथ करौंदिया वार्ड. क्र.9, जिला-सीधी, म.प्र. 486661

मो.न. 7694922003

ई-मेल – angragsidhi@gmail.com

प्रति,

उपसचिव,

DRAMA/ICH संगीत नाटक अकादमी नई दिल्ली **- 01**

विषय :- **ICH** के तहत कोहरौही गाथा का द्वितीय खण्ड का शोधकार्य प्रस्तुतीकरण हेतु ।

महोदय ,

आपके द्वारा **ICH** के तहत मुझे कोहरौही गाथा पर आधारित कलाकारों का चयन कर उन्हें सूचीबद्ध करने तथा शोध कार्य हेतु जिम्मेदारी दी गई जिसका द्वितीय खण्ड का शोधकार्य कोहरौही गाथा आपके समक्ष प्रस्तुत कर रहा हूँ ।

अतः आपसे विनम्र आग्रह है कि इसे स्वीकार करने की कृपा करें ।

" धन्यवाद "

भवदीय

नरेन्द्र बहादुर सिंह

सीधी (म.प्र.)

ईमेल :- angragsidhi@gmail.com मो. :- **7694922003, 9131730374**

पता:- गोपाल दास रोड (नियर **PHE** ऑफिस) दक्षिण करौंदिया सीधी (म.प्र.)

कोहरौहीं गाथा का द्वितीय खण्ड का प्रस्तुतीकरण

प्रस्तावित योजना का कार्यक्षेत्र राज्य -: **मध्य प्रदेश**
योजना के प्रस्तावित सांस्कृतिक विरासत/ परंपरा का नाम -: **कोहरौहीं**
योजना के प्रस्तावित सांस्कृतिक विरासत / परम्परा से संबंधित समुदाय की बोली -: **बघेली**

कुम्हार और उनकी परम्परा

दीपों के कारीगर कुम्हार कुम्भ और कार दो शब्दों से मिलकर बना है कुम्भ और कार जहाँ कुम्भ मतलब घड़ा और कार मतलब कारीगर यानी घड़ों के कारीगर , घड़ा बनाने वाली जाति को लोक ने कुम्हार कहा। कुम्भ का एक दूसरा अर्थ गर्भ भी है इस सन्दर्भ में इस जाति का मानना है की प्रजापिता ब्रम्हा के बाद कुम्हार ही एक ऐसी जाति है जो सृजन की क्षमता रखती है जिस तरह माँ गर्भ में बच्चे को पालती है उसी तरह कुम्हार भी चाक पर मिट्टी के लोंदे को अकार देता है। इस जाति का यह भी मानना है की चाक दुनिया का पहला यंत्र है इस कारण कुम्हार पहले वैज्ञानिक भी सिद्ध होते हैं। एक और अर्थ में कुम्भ अर्थात कलश का प्राचीन काल से महत्त्व चला आ रहा है, कलश के शीर्ष मध्य व अंतिम तल भाग में क्रमशः ब्रह्मा, विष्णु व सदाशिव का निवास माना गया है। जिसके चलते वर्तमान में भी कलश का धार्मिक महत्त्व है। मिटटी का कलश मात्र कलश नहीं वरन देवताओं का निवास स्थल है , और जो इस कलश के निर्माता हैं उनका सम्मान अपने आप ऊपर हो जाता है। बघेली लोक में प्रचलित किवंदंती अनुसार कुम्हार जाति के लोग अपने को पौराणिक ऋषि महाराज पुलात्स्य के पुत्र कुम्भज ऋषि (आगतस्य मुनि) के वंशज भी ठहराते हैं, वंही प्रजापति राजा दक्ष के यंहा यज्ञ के प्रमुख सहयोगी पहली बार कुम्भ का निर्माण करने वाले जन भी प्रजापति कहलाये जो की आज कुम्हारों का एक प्रमुख समुदाय है। कुम्हारों को मुख्यतया हिन्दू व मुस्लिम सांस्कृतिक समुदायों में वर्गीकृत किया गया है। हिन्दू में कुम्हारों व अन्य कलाकार जातियों को निसन्देह शूद्र वर्ग में रखा गया है, साथ ही कुम्हारों को दो वर्गों – शुद्ध कुम्हार व अशुद्ध कुम्हार वर्गों में विभाजित किया जाता है। कुम्हारों की कई समुदाय हैं ,जैसे की गुजराती कुम्हार, राणा कुम्हार, लाद, तेलेंगी इत्यादि। यह विभिन्न नाम भाषा व सांस्कृतिक क्षेत्रों पर आधारित नाम हैं और इन सभी को सम्मिलित रूप में कुम्हार जाति कहा जाता है। जैसे की मध्यप्रदेश में हथरेटी और चकरेटी कुम्हार पाए जाते हैं। बर्तन बानाने के लिए चाक को हाथ से घुमाने के कारण इन्हें हथरेटी कहा जाता है यंहा कुम्हारों को गोला भी कहते हैं। मध्यप्रदेश व राजस्थान में कुम्हारों (प्रजापतियों) के छः समूह देखने को मिलते हैं जैसे की माथेरा, कुमावत, खेतेरी, मरवारा ,तिमिरिया और मावलिया। वंही मध्यप्रदेश के बघेलखंड अंचल में ये सात समूह काशी गोत्र कनौजिया,

बर्दिया, गदहेला, अथारिया, टटहेर, चकबैस(चक्रवर्ती), पिडीहा हैं | जिसमे की समाज में कनौजिया अपने को चोख (बाकी समुदायों से ऊंचे) कुम्हार मानते हैं तथा उन्हें पंडित कहा जाता है | किन्तु वो असली ब्राह्मणों से भिन्न होते हैं | मघीय कुम्हारों को गधहेला कुम्हारों से नीचा माना जाता है तथा चकबैस(सूअर पालने वाला कुम्हार समुदाय) और गधेरो को अछूत कुम्हारों में शामिल किया जाता है | मध्यप्रदेश के बघेलखंड अंचल, बिहार व उत्तरप्रदेश में इन्ही ७-८ समुदायों के कुम्हार हैं जिनके बीच ही शादी व्याह की परम्पराएं निभाई जा रही है | गोत्र शब्द को यदि भारतीय वैदिक, पौराणिक परम्परा के हिसाब से देखा जाय तो यह उस समसामायिक वंश परम्परा की ओर संकेत करता है जो एक संयुक्त परिवार के रूप में मिलती है और पूर्व में संयुक्त परिवार के रूप में रहती भी थी और जिसकी संपत्ति भी साझा हुआ करती रही होगी | हिन्दू धर्म में गोत्र सात ऋषियों अत्रि, भारद्वाज, भृगु, गौतम, कश्यप, वशिष्ठ, विश्वामित्र और आठवां गोत्र अगत्स्य के रूप में जोड़ा गया | गोत्रो की समाज में प्रचलन बढ़ता गया क्यों की अपने आप को वैदिक वंश परम्परा को ठहराने के लिए इन सात ऋषियों में से किसी का नाम बताना ही पड़ता था | आज की दृष्टि से देखा जाय तो गोत्र भारतीय जाति विशेष के भीतर कि वह वंश परम्परा है, जिसमे पारस्परिक विवाह सम्बन्ध वर्जित है, क्योंकि लोक मान्यतानुसार इस गोत्र के सारे सदस्य एक ही मिथकीय पूर्वज की संतान होते हैं | हिन्दू धर्म में वैवाहिक संबंध बनाने में गोत्र की अहम भूमिका है | एक ही जाति के सदस्यों के बीच विवाह निषेध का उद्देश्य निहित दोषों को दूर रखने के अलावा यह भी रहा होगा की अन्य प्रभावशाली गोत्रो की लड़कियों से विवाह कर अपने गोत्र का प्रभाव उत्तरोतर बढाया जाय | बाद में गैर ब्राम्हण समुदायों ने भी इस पद्धति को अपना लिया | अब जैसे क्षत्रियो को ही देख ले पहले इनमे प्रमुखतः दो वंश परम्पराएं रही सूर्यवंश और चन्द्रवंश जिनमे क्रमशः रामायण और महाभारत के नायक सम्बद्ध थे | बाद में इन समुदायों ने भी गोत्र की परम्परा अपनाई जो आज तक देखने को मिलती है | इन दिनों गोत्र शब्द बहुत चर्चा में है, समाज में बड़े झगड़ों का प्रमुख कारण भी बना हुआ है | गोत्र शब्द संस्कृत में नहीं मिलता बल्कि गोष्ठ है, जिसे ही हम गोत्र का समानार्थक मानते हैं | गोत्र का अर्थ वंश माने तो ज्यादा बेहतर है, क्योंकि आगे चलकर यही गोत्र, वंश परिचय के रूप में देखने को मिलता है, जो की आज तक है | आज भी एक ही गोत्र के लोग परस्पर भाई-बहिन माने जाते हैं और यही कारण है कि विवाह के समय गोत्र का विशेष ध्यान दिया जाता है | प्रारंभ के सात गोत्र ही थे पर कालांतर में दूसरे ऋषियों के सानिध्य में आने के कारण अन्य गोत्र भी निर्मित हो गए | गोत्र का वैवाहिक परम्परा में प्रभाव ठीक तरह परिलक्षित होता है जैसे कि एक ही गोत्र में शादी नहीं होती | गोत्र मात्रि वंशीय भी हो सकता है और पितृ वंशीय भी और ज़रूरी नहीं की गोत्र किसी आदि पुरुष के नाम पर ही चले जैसे जनजातियों में गोत्र विशिष्ट चिन्ह और वैश्य वर्ग की जातियों में गोत्र स्थान पशु-पक्षी, वनस्पतियों के नाम व उनके काम के आधार पर रखा गया है | यही प्रचलन आर्यों में भी था | लेकिन हम लोकायत का उदाहरण ले तो देवीप्रसाद चट्टोपाध्याय का मानना है की सभी ब्राम्हण कश्यप गोत्र के हैं और यह नाम कछुए यानी कच्छप के नाम पर पडा है | इस गोत्र के ब्राम्हण के लिए दो बाते निषिद्ध हैं एक तो उसे कच्छप का मांस नहीं खाना चाहिए दूसरा कस्यप गोत्र में विवाह नहीं करना चाहिए | मानव जीवन में जाति की ही तरह गोत्रों का भी बड़ा महत्व है यह हमें हमारे पूर्वजों की याद दिलाता है | हमारे संस्कार, परम्परा और वंशावली की याद दिलाता है जिससे हमारा परम्परा और जातीय संस्कार, संस्कृति के प्रति मोह भंग नहीं

होता | हिन्दू धर्म की सभी जातियों में गोत्र पाए गए हैं ये किसी न किसी गाँव, पेड़, जानवर, नदियों, व्यक्ति, ऋषियों के नाम कुलों या कुलदेवी के नाम पर बनाए गए हैं | जैसे की आज की पूजा विधि में देखे तो मेरे घर में जब कोई पूजा होती है पिता जी अपने गुरू के गोत्र का नाम लेते हैं और गुरु का गोत्र हमारा गोत्र है | उसी तरह शूद्रो का यज्ञ में भाग लेना वर्जित था लेकिन वो जीवन भर जिस गोत्र के लोगों की सेवा करते रहे कालांतर में उनका भी उसी वंश परम्परा का गोत्र हो गया | अब पौराणिक मान्यतानुसार ऋषियों की संख्या लाखो- करोड़ है तो गोत्र भी लाख- करोड़ होने चाहिए लेकिन ऐसा देखने को नहीं मिलता सात ऋषियों के आलावा क्षेत्रीय नाम ही गोत्रों में देखने को मिलते हैं | महाभारत के शान्ति पर्व में मुख्य रूप से चार गोत्र बताये गए हैं-अंगिरा, कश्यप, भृगु, वशिष्ठ पर वंही जैन ग्रंथो में सात गोत्र का उल्लेख मिलता है जो कि लोक में भी प्रचलित हैं |

जाति की तरह गोत्रों का भी अपना महत्व है "गोत्र से व्यक्ति और वंश की पहचान होती है | गोत्र से व्यक्ति के रिश्तों की पहचान होती है | रिश्ता कायम करते समय रिश्तों को टालने में सहूलियत होती है | गोत्रों में निकटता बढ़ती है और भाई-चारा बढ़ता है | गोत्रो के कारण व्यक्ति इतिहास से सीख लेता है और वंश परम्परानुसार संस्कार बनाए रखने की कोशिश करता है जो की सामाज के लिए अति अवाश्यक है | आज सामाज के पतन का यही प्रमुख कारण है कि हम अपनी गोत्रीय संस्कृति पर कायम नहीं रहे | आज के मानव समाज या सभ्यता ही नहीं बल्कि जो सभ्यताएं नष्ट हो चुकी हैं उनके भी पतन का प्रमुख कारण संस्कृति के अनुशासन को तोड़ना रहा है, प्रकृति के अनुशाशन के विरूद्ध जाना रहा है | बघेलखंड में कुम्हार जाति की पारम्परिक जीवन शैली को चरितार्थ करती है यह कहावत-

"खूंटा पर खेती करय, गडही मा खरिहान
ठोंकि-ठांकि भीतर करय, बीकि-बकन केर खाय"

इसी तरह चाक के सम्बन्ध में यह कहावत भी उल्लेखनीय है कि-

"भन-भन करय भमरि न होय
कंदये मा लोटय सूअर न होय
हाथी घोड़ से चौगुन धाबय
जिया जंतु न होय "

चाक चलाने की डंडी को बघेलखंड में मेंडरा (चकरेटी) कहते है, तथा यह चाक से जिस नीचे गाड़ी गयी खैर की लकड़ी में फंसाई जाती है उसे गुल्ली कहा जाता है | गुल्ली का स्थान चाक पर कंहा हो यह इस पर निर्भर करता है की उस चाक पर कितनी बड़ी चीज़ बनायी जानी है | बड़े बर्तन बनाने के लिए गुलबी का चाक के केंद्र से दूर होना आवश्यक है नहीं तो बर्तन गुलबी के ऊपर तक जाएगा और चाक घुमाना मुश्किल होगा | कीला एक पत्थर के छोटे चाक में फंसाकर ज़मीन में गाडा जाता है | उस पत्थर को पाही कहते हैं , और खूंटे को कीला कहते हैं | यह खैर की लकड़ी का बनाया जाता है | कीला अपने ऊपर चाक को इस तरह धारण किये रहता है जिस तरह भगवान ने उंगली पर गोबर्धन पर्वत को धारण कर लिया था | गुल्ली खैर जाति का पुरुष वृक्ष माना जाता है इसकी खासियत यह होती है की इसकी लकड़ी घिसती या कटती कम है इसलिए ज्यादा दिन काम देता है | कीला की ऊँचाई दो से तीन उंगल ऊंची रखी जाती है ज्यादा ऊँचाई से चक तेज़ घुमाते समय कीले से बहार निकल जाने का भय रहता है | साथ ही बंद होने पर पैरो पर गिरने का दर भी रहता है | क्योंकि नीचा होने पर चक झुकने पर जल्द ही ज़मीन पर आ

जाता है | कीला चाक के जिस गड्ढे पर फिट होता है उसे लकड़ी पर टिका होता है उसे गुल्ली कहते हैं | इस स्थान पर थोड़ा तेल लगाया जाता है ताकि चिकनाई से चाक आसानी से घूमे | बर्तन काटने के लिए उपयोग किया जाने वाला धागा छेन कहा जाता है | कुम्हार इसे बहुत सिद्ध बस्तु मानते हैं | कुम्हार अपना छेन किसी अन्य जाति के लोग को नहीं देते यह बड़ी पुरानी परम्परा है इसे अपसगुन माना जता है | समझदार कुम्हार आपस में भी एक दूसरे का छेना लेते मांगते नहीं हैं | चाक पत्थर का बनता है, काले पत्थर का चाक नहीं बनता | पत्थर वो अच्छा माना जाता है जो खान्नाटेदार होता है | चाक ज़्यादा देर ताव में रहे इसलिए उसकी निचली सतह पर दो स्तर घर बनाए जाते हैं छोटे ढाई फुट के चाक को चकुलिया कहते हैं | तीन फुट और उससे बड़े चाक , चाक कहे जाते हैं | आज कल पैर से चालाने वाले और बिजली के मोटर से चलने वाले चाक भी बन गए हैं पर पैर से बनाने वाले चाक व्यवसायिक कुम्हारों के लिए बेकार हैं क्योंकि वो तुरंत ढीले पड जाते हैं | हाथ से घुमाए जाने वाले चाक पर अधिकतर कुम्हार दक्ष होते हैं | क्योंकि वो चाक की गीत के अनुसार काम करते हैं | जैसे पहले चाक बहुत तेज़ घूमता है उस समय मिट्टी को उठाना और उसे फाड़ना आसान होता है परन्तु वह बाद में कुछ सुस्त हो जाता है उस समय गीले बर्तन को अंतिम आकार देकर चाक से उतार लेना आसान होता है | यदि चाक निरंतर तेज़ घूमता रहे तो बर्तन उतारा नहीं जा सकता यही कारण है की बिजली के चाक में तीन गियर होते हैं और काम करते समय गियर बदलकर चाक की गति नियंत्रित करनी पड़ती है | कुम्हारों के लिए बिजली का चाक ज़्यादा उपयोगी नहीं होता क्योंकि एक तो यह बड़ा छोटा होता और दूसरा बिजली न हो तो काम ही न हो पायेगा | चाक पर काम करते समय जिस बर्तन में पानी रखा जाता है ऐसा कहा जाता है की कुम्हारों को यह कुंडी भगवान् शंकर ने दी थी | यह वही कुंडी हैं जिसमें महादेव अपनी भांग गलाते हैं | इसमें रखा पानी सभी प्रकार के जलो से सुद्ध माना जाता है | बर्तन की ठुकाई के लिए प्रयुक्त किये जाने वाले औज़ार थापा और पीडी कहलाते हैं | थापा लकड़ी से बनता है और पिंडी पत्थर की | पत्थर कोण चिकना होना बहुत आवश्यक है | थापा और पीडी के सम्बन्ध में यह दोहा बहुतो आप लोगों ने सुना ही होगा

" गुरु कुम्हार शिष्य कुम्भ गढ़-गढ़ काढ़े खोट
अन्दर हाथ सहार के बहार मारय चोट"|

कुम्हार जिस औज़ार से अन्दर सहारा देता है उसे पीडी और जिससे बाहर की तरफ से चोट करता है उसे थापा कहते हैं | कुम्हारों द्वारा मिट्टी के बर्तन बनाते समय जिन-जिन चीजों की आवश्यकता पड़ती है बघेली में उसे निम्न नामो से जाना जाता है –

1. **चाक-** मिट्टी के बर्तन बनाने का प्रमुख यंत्र
2. **मेंडरा-** चाक के चारो ओर वृत्ताकार रूप में बांस लगाया जाता है जिसे मेंडरा कहा जाता है | इसी मेंडरा के चारो तरफ बाधा (रस्सी) बांधकर चाक पर माटी छापी (लगाई) जाती है ताकि चाक का चारो तरफ से भार बराबर किया जा सके |
3. **खूंटी-** यह ज़मीन में गाडी गयी खैर की लकड़ी होती है जिस पर चाक घूमता है | यह खैर या सरई की लकड़ी का ही बनाया जाता है क्यों की खैर या सरई की लकड़ी मज़बूत होती है और घिसती कम है |

4. गुल्लू- यह चाक के केंद्र में लगा हुआ पत्थर है जिसमे पतला सा छिद्र होता है जिस पर नीचे की खूंटी का नुकीला भाग जुदा हुआ होता है | यह विशीष तरह का पत्थर होता जो चिकना और खान्नाटेदार होता हो तभी अच्छा गुल्लू बनाया जा सकता है | पत्थर जितना ही चिकना होगा चाक उतने ही हल्के हाथ से गति करेगा |

5. पीड़ी- चाक से उतारने के बाद मिट्टी के बर्तन को अंतिम रूप देने के लिए लकड़ी का एक औज़ार बनाया जाता है जिससे पीट-पीट के बर्तन को बड़ा किया जाता है उसे ही पीडी कहा जाता है |

6. थापा- बर्तन को बड़ा करने के दौरान उपयोग किया जाने वाला लकड़ी का बना हुआ दूसरा औज़ार जिससे बर्तन के बाहरी तरफ से चोट करते हैं |

7. मन्ना- मिट्टी का अधूरा बना हुआ बर्तन जब चाक से उतरता है तब उसे जिस सांचे में रखा जाता है उसे बघेली में मन्ना कहते हैं | अलग- अलग बर्तनों के हिसाब से अलग-अलग सांचे बनाए जाते हैं | बाद में राख लागाकर मन्ना में ही रखकर बर्तनों को बड़ा किया जाता है या अंतिम रूप दिया जाता है |

8. पाटा- वृत्ताकार चाक में केंद्र से बाहर के वृत्त को छूती हुई चार समान हलके लकड़ी की त्रिज्जायें होती हैं उसे ही बघेली में पाटा कहा जाता है |

9. बेंहचा- चाक से उतरे हुए अर्धनिर्मित बर्तन को बेंहचा कहा जाता है | जिसे कपडे से ढँक कर मिट्टी के बने ढाँचे मन्ना में रखा जाता है |कपडे से ढँक के रखने का कारण की वह जल्दी सूखे न ताकि उसे अंतिम रूप देने में कोई दिक्कत न हो और मन्ना में रखने के कारण उसकी पूर्व बनी हुई आकृति में बदलाव नहीं होता |

10. भट्टा- मिट्टी के बर्तन को जिसमे पकाया जाता है उसे भट्टा कहा जाता है |

कुम्भकार जाति के जातीय शिल्पकारिता की बात करे तो यह जाति मिट्टी के तामाम दैनिक उपयोगी वस्तुओं का निर्माण पारम्परिक रूप से करती आ रही है जिनके बघेली नाम इसप्रकार हैं – गगरी, चुकबा, दोहनी, दिया, बरायन, कूडी, तरछी, मेटा, नादि, पुरबा, पुरई, नदोला, सुराही, कुल्हर, कलशा, पैना, खप्पड़, खपड़ा, नरिया, चिलम, झूमर, हंडी, चरुई, कराही, गगरा, गमला, औंधा, कुठुली, ढोढरी, करछुली मदाइन, बाल्टी, थुकनी, गोरसी,विभिन्न तरह के खिलौने व मूर्तियाँ |

एक विशेष रचनाकार जो मानवता की तामाम सभ्यताओं में अपने होने की पुष्टि करता है | सभ्यता के निर्माण में जिसकी अहम् भूमिका है वो हैं कुम्हार | मिट्टी को अकार देने वाला कुम्हार ईश्वर के बाद दूसरा सर्जक है यही इसकी दार्शनिकता है | कुम्हार द्वारा बनाए जाने वाले गागर के सम्बन्ध में यह कहावत कि-

" अगिन कुंड से निकली भवानी, जल कुंड मुहे जाय
घटिया चढ़त गिरि गयीं भवानी जेखर मासु गीद्धि न खाय "

मिट्टी के बर्तन को पात्रो में सबसे शुद्ध माना जाता है | क्यों कि लोक मतानुसार वह तीन विधियों से होकर पवित्र होता है पहला मृदा, अग्नि और अंत में पानी | लोक कहता है की मिट्टी कभी भी अशुद्ध नहीं होती और वो तो मिट्टी है जिस तरह माटी की काया उसी तरह माटी का बर्तन | माटी के काया में भगवान

जान डालता है और माटी के बर्तन में कुम्हार जान डालता है उसे उपयोग की वास्तु बनाता है अकार देता है |

सीधी जिले में कुम्हारों के कुकुरीझर, मडबा, जोरउंधा, महराजपुर, जनकपुर, सारो, पोखरा, बतौली, खैरही, उपनी, जमुनिहा, जमोड़ी, पनमार, कुबरी , बम्हनी, सेमरिया, पोंडी, सिलबा-डांड, लकोड़ा, बरिगवां, सेमी, कोचिटा, छुहिया, कथरिया, हडबड़ो, सजहबा, नेबूहा, कठौली, कारीमाटी, मडरिया, रामपुर, पटेहरा, पटेहटा, तेंदुआ, रोजउंधा, अइठी, बारी, बंजारी, सुकबारी, बघबारी, गाडा-खोह, भदरहिया, भागोहा, भेलकी, तिलबारी, भेलकी, डोल, भमरहा, कोठार, बिछिया, पनमार, पडखुरी, बोकरो, बेलदह, भोल्गढ़, सुकबारी,पडैनिया, भदौरा, छुही-पोंडी, ताला, खरहटा, पडरी, सतनरा, बहेरा, करहिया, मलिखम, कुचवाही, हत्था-बघवार, बढौरा, हडबड़ो, कोठार, कुडिया पडखुरी, मडवा, करनपुर,कठार, सेमरिया, सेमरिया-पोंडी, धनहा, मधुगांव, सुलवार, सरदा-पटेहरा, सोनतीर-पटेहरा, बघऊ, मवई, छाबारी, चुआही, बंजारी-चुआही, करमाई, सलइंहा, जोबा, बारी, बभनी, छिउलहा, कमचढ़,कोचिटा, भरुही, ढाबा, कोठदर, तरिहा, घोघरा, हटबा, परसवार, डढ़िया, मयापुरा, पतुलखी, रामडीह, बरमबाबा , पोडरिया, करदा, टेट- पथरा, अमल्वपुर, कोचिला, बहेराडाबर, देवादांड,कठौली, बैरिहा, बंदरिहा, हिनौती, अमिरती, सुपेला, देवगांव, नकझर, अमरहबा, कुसेंडी, बारी-पान, बढ़ौना, तिमसी, परसिदी, चमरौंही, तितली, दुधमनिया, गेरुआ, बहया, चित्बरिया, केशौली, भनमारी, मुरमानी, सिहौलिया, गडबा, चिलमा, जेठुला, बकबा, सिलबार, कोटा, भैसा डोल, मेढकी, कुदरिया, खमचौरा, डीम, डिहुली, लहिया, धुम्मा, कुसपरी, पावा, दुअरा, सांडा, सुपेला, चितबरी, बघऊ आदि ग्राम हैं |

महाभारत लोक महाकाव्य है, यह सच है परन्तु उसके रचयिता वेद व्यास जी ने उसे मौखिक परम्परा से परे इसे एक अलग पहचान दी यह भी उतना ही सच है | मैंने यंहा महाभारत का ज़िक्र इसलिए किया क्योंकि मै आपको मौखिक परम्परा के महाकाव्य चदैनी से जोड़ रहा हूँ | चदैनी को मध्यप्रदेश के सीमावर्ती राज्यों में लोरिक-चंदा, लोरिकायन और चनैनी के नाम से भी जाना जाता है | बघेलखंड में चदैनी के मुझे दो पाठ मिले जिनमे थोड़े अंतर के साथ साम्यता है | चदैनी के संबंध इसके गायकों का कहना है कि यह रामचरित मानस से बडी है इसमें कुल बारह सर्ग हैं जिसमे वीर बामन और लोरिक- चन्दा प्रेम कथा का वर्णन है साथ ही दर्जनों उप कथायें भी हैं जो उसे माहाकाव्य होने का दर्ज़ा देती हैं | चदैनी है तो मूलतः यादव जाति का प्रतिनिधित्व करने वाले लोक प्रसिद्ध नायको की गाथा गायकी, पर इस गाथा को बघेलखंड में कुम्हार, बसोर, यादव, तेली आदि जातियां भी गाती हैं | प्रत्येक जाति के पाठों में जातीय विशेषता है जो की उसे बाकी पाठो से भिन्न रखती है | कुम्हार जाति द्वारा गाये जाने वाली चदैनी गाथा गायकी की इन पंक्तियों ने मुझे महाभारत का ज़िक्र करने पर विवश किया | निम्नलिखित पंक्तियों में चदैनी गाथा का ज्ञाता किसी अन्य व्यक्ति से कहता है की न तो तुम्हारी कलम रुकनी चाहिए और न स्याही ख़त्म होनी चाहिए और हाँ लिखने के दौरान तुम्हारे शब्द न फंसे यानी तुम शब्दों में न उलझना | यदि इस शर्त को स्वीकार करो तो मै चदैनी की बानि प्रस्तुत करूँ | यही शर्त गणेश जी और वेद व्यास जी के बीच थी अगर तुम शर्त पूरा न कर पाए तो मेढूली की देवी तुम्हारी खैर नहीं | बघेली चदैनी की निम्न पंक्तियाँ देखे

" कलम डुगीही मसियानी जू आजु
एकउ अक्षर डुगिहीं जू आजु
अक्षर डुगय न ददा मनबा तोंहार
तब हम कहब चदैनी के बानि
नहीं माता मेढूली करब भंडफोर"

कोहरौंही गाथा गायन परम्परा कुम्हार जाति कि एक शैली विशेष है जिसके अंतर्गत विभिन्न तरह के गाथाएँ गायी जाती हैं | यह परंपरा मूल रूप से गायिकी प्रधान है परन्तु साथ ही साथ इसमे अभिनय पक्ष भी उतना ही मजबूत नजर आता है जितना की गायिकी पक्ष | इसका मुख्य गायक गाते हुए अभिनय करता है | इसका कारण कही भी यह अरुचिपूर्ण या ऊबाऊ नहीं प्रतीत होता यह इसके प्रदर्शन पक्ष की विशेषता है | यदि हम इसकी मौखिक परम्परा के कलारूपो के बात करे तो कोंहरौंही भजन के आलावा अन्य कलारूप भी हैं जो जनमानस में प्रचलित और सराहनीय हैं | मौखिक परम्परा में गीतों और कहावतो के पीछे चल रहे कथानको का विशेष महत्व है | हर कहावत का एक अपना कथ्य है जो कालांतर समय के बदलते हुए अब जनमानस से विलुप्त से हो गये हैं | यंहा हम कोंहरौंही शैली अंतर्गत गाई जाने वाली तामाम गाथा गायकी व अन्य गीतों का नाम दे रहे हैं , जिसमे प्रदर्शनकारी और मौखिक परम्परा दोनों तरह के कलारूप शामिल हैं -

1- कृष्ण लीला
2- सती अनुसुइया
3- राम कथा
4- कबीर की उलट बासियाँ
5- शिव विवाह
6- पितमा
7- बनजोरबा
8- सजनई
9- बिरहा
10- सरवन गाथा
11- चिहुरी
12- पचरा
13- बारहमासा
14- निर्गुण गीत
15- कहावत उखान
16- चदैनी गाथा गायन
17- गढ़ केउंटी
18- विशेष रूप से मटका वादन
19- केहरा नृत्य व यादव जाति के अन्य नृत्यों का प्रदर्शन

श्रवण गाथा – कोहरौंही गाथा गायन परम्परा में जो श्रवण कुमार की गाथा कही जाती है वो पौराणिक कथाओं से अलग है | इतिहास में जो श्रवण कुमार की कथा मिलती है इसमें मत श्रवण कुमार की पत्नी को पतिव्रता स्त्री के रूप में प्रस्तुत करता है | और लोक में प्रचलित अन्य कथाएं भी शरवन कुमार की पत्नी को सास-ससुर की सेवा करने वाली बताया गया है | कुछ कथाओ में तो श्रवण कुमार की पत्नी को तो सीता हरन के वक्त रावण से लड़ने वाली जटायु को श्रवण कुमार की पत्नी कहा गया है | वंही कोहरौंही गाथा गायन परम्परा में श्रवण कुमार की पत्नी को कुलटा ,चंडाल और अपने सास -ससुर को कष्ट देने वाली कहा गया है समाज उसे शाप देता है की अगले जन्म में तुम चमगादड़ बन कर उलटा लटकती रहोगी | इसके अलावा इस गाथा गायन परम्परा में माँ-बाप के सेवा ,सेवा फल और एक लायक बेटा बनने की बात कही गयी है जो की न माँ-बाप के लिए बल्कि आगे आने वाले सम्पूर्ण समाज की दिशा प्रदान करता रहेगा | इस गाथा गायन में मानव मूल्यों का उत्कृष्ट रूप देखने को मिलता है | ये पंक्तियाँ गौर से समझने लायक हैं –

" कहा ता सरिमन खींची बान कहा ता सरिमन देई जिआय
बैरी खींचा बान छूटय परान अब नहि आय जिउना के मान
माई बाप का पानी पिअउता तजि देइत तब हमहू परान
आगे से न बोला मामा धरि के कमंडल मुख पाछे बोला
पहिले पानी दिहा पिआय फेर बोला पाछे मोर जस बानि"

हरिश्चन्द्र गाथा – देश की तमाम गाथा गायन परम्पराओं में राजा हरिश्चन्द्र की दानशीलता और संघर्ष की कथा सुनने को मिलती है | वंही जब हम बघेलखंड के कोहरौंही गायन शैली के अंतर्गत हरिश्चन्द्र की गाथा सुनते हैं तो यंहा कथा को छोटा कर दिया जाता है और उसके मूल रूप को प्रयोगिक रूप में प्रस्तुत करती है | राजा हरिश्चन्द्र की दानशीलता अपने वचन के मातहत लाख यातनाओं को ढोना आज का समाज जो अब निर्मित हो रहा है वो कहता है की यह उस ज़माने की बात है अब बहुत कुछ बदल गया है हम अपने वचन पर कायम न रहे तो ज़्यादा बेहतर होगा | यंहा समाज या लिखित साहित्य तो चुप है लेकिन लोक मुखर हो उठता है और साफ़-साफ़ लब्जो में कह देता है की लोग अपनी पुरानी परम्परा का अनुसरण करने में अपनी बेईज्जती मानते है | यही कारण है ऐसा फरेबी ,धोकाधड़ी वाला समाज हमारे सामने अपार पहाड़ की तरह खड़ा हो गया है, जिसके आगे हम सब खुद को असक्षम पा रहे हैं | इस गाथा गायन परम्परा की कुछ पंक्तियाँ जो की ज्ञान परिपाटी की मिसाल हैं-

" का कही राजा न कहि जाय,रोहित बेटा खत्म भयें हां |
पिता जलाबय का जघा दा
बोलयं राजा करय्य ज़वाब ,रानी पहिले नेग चार दइदा |
फेर चिता जलाबय के जाघा देब
बोलय रानी करयं ज़वाब रोहित बेटा
हम तोंहरय ता परानी आहन,हमसे नेग चार न ला |
बोलय राजा करयं ज़वाब कब तू रानी रहिउ हमार "

निर्गुण भजन – निर्गुण भजन गायन परम्परा में कबीर की उलटबासियो के अलावा लोक की मौखिक परम्परा के बहुत से मृत्यु संस्कार के उपरान्त गाये जाने वाले गीत भी शामिल हैं | इन गीतों में प्रक्रति, मानव जीवन सार , प्राणी मात्र के प्रति सहानुभूति की बात स्पष्ट होतीहै जो इन पंक्तियों में देखने को मिलती है

" बोलय काया मा सुगनबा बड़ा लहरी
ये बड़ा लहरी राम, बड़ा लहरी राम रे बड़ा लहरी
पांच तत्व के बना पिंजरबा जामे सुगना बोलय
कबहू –कबहू मन मंदिर आपन जौहर खोलय
बोलय सांझे अउ बिहनबा बडा लहरी
मात गोद मा जनम लिहे हौं माता दूध पिलाए
सुगना के सेवा के खातिर साथ लगी नउ नारी
नउ इन्द्रिय के बस मा होइके उन्हई न भरय हकारी
न मानय माता केर कहनबा बड़ा लहरी
पढ़ी-लिखी के जब भये सयाना मातु कहय सरमाये
न छुअय माता आकर चरनबा बड़ा लहरी
मात-पिता का माना सुगना अब ता धरम बनाबा
राम नाम लय सदगुरु के आपन जनम बनाबा
छुटिहंय जनब अउ मरनबा बड़ा लहरी
बोलय काया मा सुगनबा बड़ा लहरी |"

कृष्ण गाथा – कोहरौंही गाथा गायन परम्परा के अंतर्गत तमाम लोक में प्रचलित कथाओं का गायन किया जाता है | उन कथाओं में से कृष्ण कथा का गायन भी प्रमुख है जो की कोहरौंही शैली अंतर्गत ही है | कृष्ण कथा के बहुत से अंश इस गाथा गायन परम्परा के अंतर्गत हैं लेकिन मैं अभी कृष्ण बालापन की एक घटना कि ज्ञान परिपाटी जो की कोहरौंही शैली में नये प्रयोगों और मीमांसा के साथ प्रस्तुत होती है –

"एक पेड़ तर सुता कंधइया मुख तर मुरली दबा कर के
आय गयीं रस गढ़ कय सखियाँ लय गयीं मुरली चुरा कर के
कुछु हेरयं कुछु रोबयं कंधइया कुदत कुदत घर जा करके
घरबा रहीं हौं माता जशोदा गोंदिया लेत छुपा करके
आने दिन लाला बिंहसैट आमा आजू काहे मनबा मलिन है जी
धंउ कांधा तय खेती चराया धंउ बन बिगड़ी गाय रहीं
न माता हम खेती चारायन न बन बिगड़ी गाय रही
एक पेड़ तर सुते रहन हम मुख तर मुरली दबा कर के
आय गयीं रस गढ़ कय सखियाँ लय गयीं मुरली दबा कर के
बांस के बंसिया जाय देब लाला सोनबा देब गढ़ाय रही
बांस के बंसी न छोड़ब माया हीरा रतन जड़ाय रही
बांस कय बंसी हम फूँकत रहन ता सोरा सय गइया मोहाय रहीं
अरे बंसबा केर बंसिया न देबउबा माता ता छोड़ब गोकुल ससुरारि
तब लय के बंसिया भाग कंधइया अइसन बालापन मा
तब गेंदबा खेलय जमुन जी के तीर ||"

पितमा- यह कलार जाति का जातीय गीत है लेकिन तमाम अन्य जातियां भी गायकी का प्रदर्शन करती हैं जैसे की कुम्हार जाति के लोगों से भी मुझे यह गीत सुनने को मिला उसकी कुछ उसकी कुछ निम्नवत हैं –

"केकरा करना तू मुडबा मुड़ाया अउ केकरा करनबा
तू फ़कीर ....
राम केर करनमा हम मुडबा मुडायन लछिमन करनबा
तू फ़कीर ....
माया केर करनबा बनन बन जोगिया धरन डगर वन बीर
तू फ़कीर ...

रामकथा- कुम्हार जाति के लोग बघेलखंड के लगभग २०० ग्रामो में बहुतायत संख्या में निवासरत हैं। जिनके अलग-अलग गोत्र भी हैं। गोत्र के अन्दर लगभग 5-5 कूरियाँ हैं जिनमे वो अपनी विवाह परम्परा का निर्वहन करते हैं या यूँ कहें की शादी व्याह कर सकते हैं। बघेलखंड के कुछ ही ग्रामो में अब इस गाथा गायन परम्परा के लोग बचे हैं जिनमे से यह राम कथा गाने वाले कलाकार भी रहे जो परम्पराओं को प्रकृति से जोड़ने का कार्य करती हैं आइये देखतें हैं यह भरत प्रसंग-

"पूछा थां भारत राम कंहा माई
राम कंहा माई राम कंहा माई
जब से आयन अवध पुरी मा मोहि उदासी छाई
घर गइला अउर घात पहरबा रोंबा थां सब माता
बेजा का भा भाई
सीता बिन मोर मंदिर सूना लछिमन बिन ठकुराई
राम बिना मोर गही सूनी उलट पछडबा भरत गएँ खाई।
मातु केकई उठि कय बोलीं राम लखन दोऊ भाई
ओनखा ता बनमास भएँ हाँ तोहीं गही हम देब बिठाई
कहे भरत सुनु मातु केकई का हो कुमति अब छाई
तुलसी दास एक आस रघुबर के इंही बतिया मा कुछु नाहि भलाई

पचरा- हुक्का फोरयं चिलम दइ मारा
लतबा चारि भतारेउ का मारा ओनखर दिदबा देखा न
ओनखर दिदबा देखा न धरयं बा नइहर के डगरिया
ओनखर दिदबा देखा न...
ओसरा से निकरय दुअरबा मा ठुनकय
कहय नहीं हो जाबय न
बिन पइरी केर गमनबा नहीं हो जाबय न
हुक्का फोरय चिलम दय मारय
लतबउ चारि भतारेउ का मारय
ओनखर दिदबा देखा न
धरइबा नइहर कय डगरिया ओनखर दिदबा देखा न

बारहमासा-

" राजा इहउ हो महिनबा बीता जाय हो, कंधइया छाये मधुबन मा

शीतल चन्दन अंग मा रगडत, कामिनी करत श्रृंगार हो
इतना श्रृंगरबा तू उआ दिन करतिउ, सुखबा सोमनउ के मसबा अषाढ़
साबन अउर सील है नीरा, बड-बड बूंदन परत शरीरा
पहिरत कुसुम उतारत क्षीरा, पपिहरा बोलत पिउ बन मोरा
राजा इहउ हो महिनबा बीता जाय हो, कंधइया छाये मधुबन मा
लागि गएँ भादउ कइ मासा, गरजय अउर घहराय हो
बिजुरी चमकय मोर जिउ डरपय राजा केकरे सरनिया चली जाऊं हो”

और अंत में यही कि जो पूरी दुनिया को आलोकित करने वाले दिए का निर्माण करता है, आज उसी का जीवन अँधेरे में है | कुम्हार जाति के जातिगत पारम्परिक शिल्प कला और कोंहरौहीं शैली में गाई जाने वाली तमाम गाथाओं के संरक्षण की दिशा में कार्य होना अति आवश्यक है वर्ना वह दिन दूर नहीं जब यह कला भी विलुप्तता की कागार पर होगी | भुखमरी झेल रहे कुम्हारों के दिन फिर से बहुरने के असार नज़र आ रहे हैं क्या कभी हम ऐसा कह पायेंगे | सरकार को चाहिए कि उन्हें मुफ्त मिट्टी मुहैया कराने के साथ ही उनके द्वारा निर्मित मिट्टी के बर्तनों कि बिक्री का भी पक्का इंतजाम करे | इसके तहत सरकारी विभागों में मिट्टी के बर्तनों का इस्तेमाल अनिवार्य कर दिया जाय | और अब कुल्हड़ में चाय पीना आवश्यक कर दिया जाय | और मिट्टी के बर्तन बनाकर कुम्हार अपना जीवन यापन करे साथ ही सरकार कुम्हार जाति और जाति की कला के उत्थान के लिए बेहतर कदम उठाये क्यों कि **दीपों के कारीगर** आज गुमनामी की ज़िन्दगी बसर कर रहे हैं |

बघेली कलारूप -: बघेलखण्ड में विभिन्न जातिगत कलारूपों की भरमार है उन्ही के आधार पर हम यह वर्गीकरण कर रहे हैं | इन्ही वर्गीकरण विधियों के आधार पर हम नाटकीय तत्वों को भी समझगें |

बघेली गीतों का वर्गीकरण -:

1. संस्कार गीत - (जन्म, उपनयन, विवाह, मृत्यु चार संस्कारों के कुल ४८ प्रकार के गीत)
2. ऋतु गीत - (वर्षा, हिंडोला, बारहमासा, कृषि, क्वांर स्नान व कार्तिक मास से चैत मास तक के कुल 6 प्रकार के गीत)
3. अनुष्ठानिक गीत /देवी गीत - ३ प्रकार
4. श्रम गीत - (बघेलखंड में टप्पा, झोलइयाँ, मलेलबा, ददरिया, सैरा, बनजोरबा, ठड़गिता मिलाकर 7 प्रकार)
5. यात्रा गीत
6. जातीय गीत - (अब तक के शोध कार्य में लगभग ११ प्रकार)
7.खेल गीत - (१०७ प्रकार के बघेली खेलों में से १३ खेलों के गीत प्राप्त हुए हैं |)
8. मंत्र गीत - (विभिन्न मन्त्र गीत लगभग १७ प्रकार)
9. अन्य गीत - (कबीर, कथा व नृत्य आदि के गीत)

बघेली लोक कथाओं कि विषय वस्तु -: १. पशु-पक्षी सम्बंधित कथाएं २. जानवरों सम्बंधित कथाएं ३. नीतिपरक कथाएं ४. धर्म संबंधी कथाएं ५. स्थानीय देवताओं सम्बंधित कथाएं ६.जातिगत कथाएं ७.भूत-प्रेत संबंधी कथाएं ८.जातक कथाएं ९. प्रेम परक कथाएं १०.युद्ध संबंधी कथाएं ११.खेती किसानी संबंधी कथाएं

बघेली लोकगाथा - १.चदैनी २.छाहुर ३.ललना ४.चंदनुआ ५.पदुम कंधइया ६.गढ़ केउंटी ७.रेवा–परेवा ८.भरथरी ९.नल-दयमन्ती १०.राजा हरिश्चन्द्र ११.गोंडी १२.शिव-पार्वती १३.रानी केतकी १४.आल्हा १५.बनजोरबा १६.ढोला म्हारू १७.बसामन मामा १८. बाना गीत १९. कर्ण गाथा
२०. बसदेवा

बघेली कहावतों की विषय-वस्तु -: १.कृषि संबंधी कहावते २.नीतिपरक कहावते ३.जातिगत कहावते ४.पशु-पक्षी संबंधी कहावते ५.धर्म संबंधी कहावते ६.राजवंश संबंधी कहावते ७.तकनीक संबंधी कहावतें।

बघेलखंड के लोक नृत्य -: १. करमा २. शैला ३. गुदुम्ब-बाजा ४. अहिराई ५. अहिराई-लाठी ६.केहरा ७.सजनई ८.जेड़ी ९. कोलदहका १०. मटकी ११. भगोरिया १२. भीली १३. ददरिया १४. सुआ-रीना १५. देवारी-छौंका १६.चमरौही १७. धोबिआई १८. कोंहरौहीं १९.जवारा काली नृत्य २०.लहलेंदबा २१. बरिहौंही २२. मोरिला नृत्य२३. बाघ नृत्य २४. दुल-दुल घोड़ी नृत्य (लिल्ली घोड़ी नृत्य) २५. शैला-डंडा २६. छपैया २७. अगुआनी २८. लागा २९. राई ३०. कलशा ३१. बैगा फाग नृत्य ३२. शैला-रीना ३३. अहिर नाचा ३४. परघौनी ३५. झकझुलिया आदि।

बघेली शिल्प कला -: १. बांस शिल्प २. काष्ठ शिल्प व पत्थर शिल्प ३. लौह शिल्प ४. मिट्टी शिल्प

बघेली चित्रकला व अंग अंकन -: १. आदिवासी पेंटिंग २. भित्ति चित्र- (बैगा, गोंड, घसिया, कोल, ढोलिया आदि के भित्ति चित्र) ३. गोदना कला

इन तमाम कलारूपों में नाटकीय तत्वों की भरमार है। चाहे वो जनजातीय कलारूप हों या लोक समाज के अन्य लोकतत्व इन सबमें नाटकीय तत्व हैं। मुझे शोध के 2 वर्षों में निम्न विषयान्तर्गत अध्ययन करना है। मेरे द्वारा अब तक जनजातीय गाथा गायकी बाना पर शोध कार्य किया गया और निहित नाटकीय तत्वों को नाट्यालेख एवं निर्देशन में प्रयोग किया गया। मेरे द्वारा बघेली बोली में लिखे गए तमाम निम्न नाटकों- महाबली, नरकासुर, एकलव्य, कर्णभारम(बघेली आलेख), सौरीसेनी आदि नाटकों में बघेली के नृत्य,गीत, गाथा गायन शैली के साथ-साथ उनमे निहित नाट्य तत्वों को प्रयोग किया गया है। जिनका मंचन देश के प्रख्यात नाट्य उत्सव भारंगम सहित दर्जनों राष्ट्रीय-अंतर्राष्ट्रीय महोत्सवों में हो चुका है। बघेली बोली में तैयार नाटक एकलव्य भी इस बार थिएटर ओलम्पिक में हो रहा है। नरकासुर नाटक बघेली मिथ और किवंदंतियों, बघेली गाथा गायन रूपों के बदलते नाट्य शैली के आधार पर तैयार किया गया है। सीधी में हो रहे बोली के रंगमंच में मेरे द्वारा किये गए शोध कार्यो की अहम भूमिका है चाहे वह शैलीगत संवाद अदायगी हो या फिर रंगसंगीत। वर्तमान समय में सीधी में बोली को लेकर हो रहे कार्य में बोली की संस्कृति और कलारूपों में निहित नाट्य तत्वों की अहम भूमिका है।

कुम्हारों की गीत एवं कथा गायकी परम्परा -:

लोक गीतों का प्रधान तत्व गेयता है, यह मूलतः और सिध्यान्तः जातीय और सामुदायिक रचनाये हैं। इनका सर्जक कोई एक व्यक्ति नहीं बल्कि पूरा लोक समाज होता है। जन्म से लेकर मृत्यु तक गाये जाने वाले ये गीत कथानक की दृष्टि से भी बड़े समृद्ध हैं। महाउर भाग-१ में जन्म संस्कार के भिन्न-भिन्न कथानक वाले गीतों का संकलन है। बघेलखण्डी लोक गीतों में कथानक की बड़ी समृद्ध परम्परा है। बघेलखण्ड की मौखिक परम्परा से संग्रहित गीतों की यह महाउर भाग-१ पुस्तक आप तक पहुंचाते हुए

अत्यंत हर्षित हूं। महाउर भाग-१ पुस्तक सोहर गीतों की गायकी और कथा कहने की भिन्न-भिन्न शैलियों पर आधारित है। संस्कार गीतों में सोहर गीत की अपनी विशिष्ट पहचान और महत्ता है। इन लोक गीतों के संबंध में बघेलखण्ड में एक कहावत प्रचलित है - 'छरहा लगाबा गीत बढ़ाबा'। लोक का मानना है कि यह गितनार की सूझ-बूझ, कल्पना और अभिव्यक्ति की क्षमता पर निर्भर करता है कि वो गीत को कितना बढ़ा सकती है। जन्म और विवाह संस्कार गीतों में सम्बंधित रिश्तेदारों के नाम जोड़-जोड़कर गीत बढ़ाये जाते हैं। सोहर ग्राम्य गीतों में बड़ा प्रचलित है। गोस्वामी तुलसीदास जी ने भी इस गीत की लय को अपनाया है। सोहिल शब्द से सोहर बना है। सोहिल का अर्थ शुभ से है। यहाँ शुभ से तात्पर्य अनुष्ठान और नये जीव के धरती पर जन्मोत्सव के मृदु गीत से है। बघेली में सोहर का अर्थ सोहइ से है सोहइ यानि कि जिससे मन जुड़ाये, हृदय को ठंडक पहुंचे, प्रिय लगे। सोहर गीत प्रसव पीड़ा से कराहती प्रसूता के चेहरे की मुस्कान है। सोहर गीत का गायन लोक में संगीत चिकित्सा के रूप में हज़ारों-हज़ार वर्षों से होता रहा है। लोक में पुत्र जन्म के अवसर व उसके पहले से भी गाये जाने वाले गीतों को सोहर या छोहर कहा जाता है।

होत भोर भिनसार
ता पहुआ के फाटत हो
अब बहुआ के जनमें ललनबा
गाबइं सखि सोहर हो

सुबह होते ही जैसे नये दिन के लिए नये सूर्य का नया जन्म होता है, उसी तरह माँ की कोख से नये जीव ने जन्म लिया, सखियाँ सोहर मंगल गीत गाने लगीं। सूर्य की तरह ही पूरी प्रकृति ने उस नये जीवन का धरती पर स्वागत किया। पहु फटना अर्थात अंधकार का छटना माँ की कोख से जन्म लेता बालक और रात की कोख से जन्म लेता सूर्य दोनों ही जीवजगत के लिए उम्मीद की रोशनी और जीवन उत्सव साथ लेकर आते हैं।

पिय संग सोइन अटरिया
ता गरभ जनानी हो
पांच महिनबा के लागत
आई सधौरी हो
अब निरखइं गोतिनी गरभ
होरिल का होइहीं हो

गर्भावस्था के दौरान भी लोक में सोहर गाने की परम्परा है। गर्भ धारण के पांचवे महीने में लड़की के मायके से सधउरी आ जाती है, सधउरी में गर्भावस्था के समय खाये जाने वाले पौष्टिक भोज्य पदार्थ, फल-फूल और मेवे होते हैं। गर्भ जब पांच महीने का हो जाता है तो गाँव की सयानी औरतें गर्भ को जांचने परखने आने लगतीं हैं और उपयोगी सुझाव देती हैं। एक तरह से यह अनुभव संपन्न चिकित्सकीय परामर्श हुआ करता था, जिसका परिवार के लोग पालन करते थे।

ऊंची रे रंगमहलिया
अउ ऊँची अटरिया हो
अब पान अइसन पातर धनिया

गावइं मृदु सोहर हो

सोहर किस अवसर पर किन महिलाओं द्वारा गाया जाता है, इसका सुन्दर चित्रण सोहर की उपरोक्त पंक्तियों में वर्णित है| ऊंचे रंगमहल की ऊँची अटारियों पर सुघड़ बदना महिलायें मृदु सोहर का गायन करने लगीं हैं| सोहर गीत महिलाओं द्वारा गाये जाने वाले गीतों में प्रमुख गीत है| महिला लोक संगीत का स्वरुप अत्यंत सरल व सहज होता है जिसमे सभी महिलायें शामिल हो सकती हैं| बोलचाल के शब्दों से बुने इन गीतों को आम महिलायें भी गितनारों के साथ दूसरे पक्ष में गा सकती हैं, लेकिन उसकी भावभूमि और सांगीतिक विशिष्टता और सामाजिक चेतना की थाह पाना सहज नहीं|

खुलि गयें बजुर किबरबा
खुलीं हथकड़ियाँ हो
अब देबकी के जनमें ललनबा
गावइं सखि मंगल हो

सोहर को मंगल गीत भी कहा जाता है, सोहर की उपरोक्त पंक्तियों में देवकी के कारावास में कृष्ण जन्म की कथा का वर्णन है| गीत की पंक्तियों में देवकी के बंधन खुलने का ज़िक्र और सखियों के सोहर रूपी मंगल गीत गाने का उल्लेख है| सोहर गीतों के संकेतार्थ/निहितार्थ और उनमे छुपा दर्शन अद्भुत है| इन पंक्तियों में देवकी के मात्र बाह्य बंधनों के खुलने की बात ही नहीं है, माँ बनने से औरत जीवन बंधन से भी मुक्त हो जाती है, उसका स्त्रीजन्म सार्थक हो जाता है|

रामा उठीं जब महलिया मा सोहर
अउ कनबा सबद पड़ें हो
अब अनलेखी बंधन छुटि गयें
सफल भयें तिरिया जनम
ललना के मृदु मृदु किलकि
अउ सखिया के सोहर हो
अब सकल बिथा गई नदाइ
मनबा धीरज लागइ हो

१. सबद - शब्द
२. बिथा - व्यथा
३. नदाइ - शांत होना

जब औरत पुत्र जन्म की पीड़ा से कराह रही होती है, उस वक़्त महिलाओं के सम्यक स्वर की जो गूँज उसके कानो में पड़ती है वह मंगल कामना की होती है| दर्द से चीखती जच्चा के चेहरे पर मुस्कान की लहर दौड़ जाती है और वह अपने जीवन को सफल समझती है| सोहर क्या है और उसकी गायकी का रहस्य क्या है उसे उपरोक्त पंक्तियों से बेहतर भला कौन कह सकता है|

सोहर गीतों में कथानको की उत्कृष्टता, प्रधानता और भिन्नता के आधार पर हम इसके वर्ण्य विषय को समझ सकते हैं| सोहर गीतों में मूलतः सम्भोग श्रृंगार का वर्णन ही मिलता है| इनमे स्त्री पुरुष की रति

क्रीड़ा, गर्भाधान, गर्भिणी के शरीर यष्टि, प्रसव पीड़ा, साध, दाई का बुलाया जाना, पति पत्नी की नोक-झोंक, सास बहू व ननद भौजाई की तकरार, बाँझ स्त्री की व्यथा, परपुरुष व परस्त्री प्रेम, उछाह उत्सव, मंगल कामना, छल/कपट, मर्यादा, स्वाभिमान और निष्ठा की भावना को व्यक्त करता स्त्री जीवन की व्यथा का जैसा मार्मिक चित्रण इन गीतों में मिलता है वैसा अन्यत्र कहीं नहीं | इन्ही वर्ण्य विषयों के अंतर्गत सोहर गीतों के प्रभावी कथानक महिलाओं के कंठ से युगों-युगों से फूटते रहे हैं | ज़्यादातर सोहर गीतों में तटस्थ दर्शक भाव एवं स्वयं से जुडी घटनाओं का ही जिक्र हुआ है | इससे यह स्पष्ट होता है की लोक गीतों के जन्म लेने के संबंध में जो समूह की भूमिका बतायी जाती है, दरअसल वो प्रथम उदगार के बाद की है | जिसमें गीतों की अन्य कड़ियां व मिलते-जुलते अन्य कथानक शामिल किये जा सकते हैं | बघेली सोहर गीतों के पारम्परिक गायन के समय उपयोग आने वाले वाद्य यंत्रों की बात करे तो फूल के लोटे, थाली के अलावा अन्य वाद्य यंत्रों का जिक्र किसी भी सोहर गीत में नहीं है और न ही परम्परा संवाहकों से ऐसी कोई जानकारी मिली | यहाँ पुत्र जन्म के पहले या उसके बाद के विभिन्न व्यापारों तथा क्रिया कलापों के अवसर पर गीत गाये जाते हैं, जिनके कथानक सोहर राग परम्परा में ही समाहित हैं जिसे हम जन्म संस्कार के अवसर पर पूर्ण की जाने वाली रश्मों और रीतियों से समझ सकते हैं -

सधौरी - सधौरी का संबंध साध से है, जब स्त्री का गरभ ५ महीने का हो जाता है तब उसके मन में खाने-पीने और पहनने-ओढ़ने को लेकर तरह-तरह की इच्छाएं पैदा होती हैं | जिनकी पूर्ति करना पति या परिवार के लोगों की ज़िम्मेदारी होती है | इसी इच्छा को बघेली में साध कहते हैं | सोहर गीतों में इसका बखूबी चित्रण मिलता है-

सेजिया मा सोबइ पियरबा
ता बहुआ जगामइ हो
अब लागि अमिलिया के साधि
अमिलिया तुहू लउतेऽ हो

इसी तरह कपड़ों और बच्चे के खिलौने की मांग को लेकर दर्जनों सोहर गीत हैं | स्त्रियाँ जब गर्भ धारण करती हैं तो उनके मायके से सिधौरी आती है जिसमें तरह-तरह के पकवान, मिष्ठान तथा वस्त्र आभूषण रहते हैं | कुछ सोहर गीतों और उनके गितनारों से पांचवे महीने में पचमासा और सातवें महीने में सतमासा उत्सव मनाने की का भी उल्लेख मिलता है | अभी भी कुछ घरों में लड़की के मायके से पांचवे और सातवें महीने में वस्त्र आभूषण और पकवान आते हैं | सधौरी से सम्बंधित गीतों में पति-पत्नी का हास परिहास, इच्छापूर्ति का वर्णन, गर्भधारण पश्चात स्त्री की सुंदरता का वर्णन, उसके मन में उठने वाले तरह-तरह के विचारों की भूमिका बांधते कथानक कभी-कभी बेहद करुण और मार्मिक रूप भी ले लेते हैं |

माया हमरे अमिलिया के साधि
अमिलिया हमू खाबइ हो
कउन छयल चित घाले
अमिलिया तुहू खाबेऽ हो
अब मोर पूत बसइं खरिकबा

चराबइ गइयां हो
एतना जो सुनिन बहुरानी
सोनर घर गई हां हो
सोनरा सोने सांकर गढ़ि देतेऽ
चोरबा फंसउबइ हो

1. **अमिलिया - इमिली**
2. **घाले - बिगाड़ना**
3. **खरिकबा - पाही, यानी की पशुओं को बाँधने या एकत्र करने की विशेष जगह**
4. **सांकर - सांकल, जंजीर**

गीत में गर्भिणी स्त्री अपने सास से कहती है कि मां मेरा मन खटाई खाने का कर रहा है पर आपके पुत्र परदेश में हैं, तो देवर जी से कहकर बगीचे से दो आम तुड़वा दीजिये | यह सुनते ही सास बहू से कहती है कि मेरा बेटा तो परदेश रहता है, तू किसके साथ हमबिस्तर हुई और तेरा गरभ ठहरा, तू किसका पाप मेरे बेटे के सर मढ़ना चाहती है ?

देउतही सोहर - पुत्र जन्म के तुरंत बाद जो प्रथम सोहर गीत गाया जाता है उनमे देवताओं का या उनके जीवन का वर्णन होता है | इसलिए उन्हें देउतही सोहर कहा जाता है | प्रायः देउतही सोहर गीत घर की बड़ी-बूढ़ी महिलाओं द्वारा उठाये जाने की परम्परा है |

कउने घरी भये सिरी राम
कउन घरी लछिमन हो
अब कउने घरी भरत भुआल
महल मोरे जगमग हो

00

कहमा से आई महरानी
कहमा सिउसंकर हो
अब कहमा से आयें भगबान
महल मोरे जगमग हो
पुरबइ से आई महरानी
पच्छिम सिउसंकर हो

इन पंक्तियों में राम जन्म की कथा है | एक सखी दूसरी सखी से दशरथ के चारों पुत्रों के जन्म की घड़ी, नक्षत्र, उनकी मांओं और उनके जन्म का उद्देश्य पूछती है | कुछ इसी तरह दूसरा सोहर गीत भी है जिसमें शिव और देवी दुर्गा के आगमन की कथा का उल्लेख है |

बधावा या रोचन-

रोचन का अर्थ बघेली में कहने, बांटने या बोलने से है | इससे सम्बंधित बघेली में एक कहावत भी है कि "काम नारद के ओतइ घर-घर बानी रोच्चइ" | यानी नारद का घर-घर संदेशा पहुचाना, बात को कहना ही

एकमात्र कार्य है | प्राचीन काल में जब यातायात की सुविधाओं का नितांत अभाव था तब पुत्र जन्म की सूचना संबंधित रिश्तेदारों, खासकर बहू के मायके व नवजात शिशु की बुआ के घर पहुचाना आवश्यक माना जाता था | रोचन के रूप में नाई हल्दी और चावल ले जाता है जिसे अक्षत कहते हैं | वो लड़की के मायके जाकर लड़की के पिता और भाई व ननद के घर ननद और ननदोई का अक्षत लगाकर टीका करता है | रोचन के साथ ही संबंधित रिश्तेदारों में बधाव भिजवाने की परम्परा है | बधाव का अर्थ बधाई से है | बधाव चमार जाति के कालाकारों द्वारा नगड़िया पर बधाव ताल के वादन को कहा जाता है | यह ताल विशेष रूप से पुत्र जन्म के अवसर पर ही बजाया जाता है | इस ताल में महिलायें नृत्य भी करती हैं | बधाव ताल के बजते ही लोग समझ जाते हैं कि फलां व्यक्ति के लड़की या भाई के यहाँ बालक का जन्म हुआ है | जिसके यहाँ बधाव जाता था वो नाई (रोचन ले जाने वाले को) चमार (बधाव बजाने वाले को) यथाशक्ति रूप नेंग (उपहार) देकर विदा करते थे | इस रिवाज़ का उल्लेख करने वाले दर्जनों सोहर गीत हैं | लोक आज भी इस परम्परा का निर्वहन उत्सव रूप में कर रहा है | देखिये एक सम्बंधित गीत -

हक्र नगर केर नउआ
हकरि बेगि आबा हो
नउआ बहुआ के भये हां ललनबा
रोचन पहुंचाबा हो

00

दुअरे मा बाजइ हो बधाउ
तबइ नीक लागइ हो
अब मृदु-मृदु उठइ सोहरिया
गावइं सखि मंगल हो

नाड़ा छिदाई- पुत्र जन्म के तुरंत बाद धाय (दाई) को बुलाया जाता है | दाई बच्चे के प्लेशेंटा नाड़े को मां के गर्भ से अलग करती है, इसे लोक में नाड़ा छिदाई कहा जाता है | बच्चे का पिता धाय को बुलाने के लिए चलनी में अनाज लेकर जाता है | धाय से कहता है कि- धाय, फलां को संतान की प्राप्ति हुई है, मैं तुम्हे नाड़ा छिदाई के लिए आमंत्रित करने आया हूं | चलनी में अनाज लेकर जाने का लोक दर्शन बहुत ही उच्च कोटि का है | लोक कहता है कि चलनी में हज़ारो छिद्र होते हैं, उन्ही हज़ारो छिद्रों की तरह ही जन्म लेने वाला बालक हज़ारो वर्ष बिना किसी व्याधि के जीता रहे | नाड़ा छिदाई के बाद से आगे के छः दिनों यानि छठ संस्कार होने तक बघेलखंड में धाय माँ के रूप में चमारिन जच्चा और बच्चा की देखरेख करती है | छठ के दिन सोबर माई (छठ माई) के पूजा अनुष्ठान का कार्य नाउन देखती है | छठी के दिन से बरहों संस्कार तक के सभी पारम्परिक कार्यों में उसकी सहभागिता होती है | नाड़ा छिदाई के सम्बंध में बघेलखंड में एक कहावत प्रचलित है | बड़ी बूढ़ी महिलायें जब किसी के एक ही स्थान पर बार-बार जाने या एक ही काम बार-बार करने से क्रुद्ध होती हैं तो कहती हैं कि – "का तोरे पुरिखन के उहाँ नाड़ा खेड़ी गाड़ा है" ? यानी क्या तुम्हारे बाप दादा का वहां नाड़ा (प्लेशेंटा) गाड़ा हुआ है कि बार-बार वहां जाते हो | दरअसल धाय द्वारा जो नाड़ा काटा जाता है उसे यत्र-तत्र नहीं फेंका जाता बल्कि सोबरी वाले कमरे में ही किसी नियत जगह पर गाड़ दिया जाता है | ग्राम्य संस्कृति में सोबरी के लिए घर में निश्चित कमरा हुआ करता है | जहां सब का

नाड़ा गाड़ा जाता है | वह घर का कोना या कमरा बाकी के दिनों में सार्वजनिक प्रयोग में नहीं लाया जाता | उस स्थान के सम्बंध महिलायें सचेत भी करती रहती हैं कि - लाला उहन तोंहरे बापउ, बाबा के नाड़ा खेड़ी गाड़ा है |

पानी बइठाई और बिलुई भात- पुत्र जन्म के दूसरे दिन प्रसूता लकड़ी यानि विशेष तरह की जड़ी बूटी मिट्टी के बर्तन में पानी के साथ पकायी जाती हैं और फिर कपड़े से छानकर वह पानी को प्रसूता को पिलाया जाता है जिसे **'परसुतिहा'** कहा जाता है, यानि की प्रसूता के लिए विशेष रूप से तैयार किया गया पानी | परसुतिहा जन्म के दूसरे दिन जच्चे को देना अनिवार्य होता है, इसे लोक में पानी बैठाना कहा जाता है | बघेली बोली में बैठाने का तात्पर्य गोबर के कंडे की आग पर गर्म करने से है जैसे कि दूध बैठाना | दूध जब गोरसी (मिटटी का बर्तन जिसमें कंडे की आग रखी जाती है) पर दोहनी (गाय दुहने का मिट्टी का बर्तन) में रखा जाता है तब उसे बैठाना कहा जाता है | इसी तरह प्रसूता को गोरसी में बिठाया पानी पीने को दिया जाता है | पुत्र जन्म के तीसरे दिन प्रसूता को काला नमक, जीरा और हल्दी मिलाकर जो चावल खिलाया जाता है उसे बघेली में बिलुई भात कहते हैं | परसुतिहा और हल्दी पीसने का काम सास या जेठानी द्वारा किया जाता है |

सोबरी - सोबरी का अर्थ मंगल ओबरी से है | घर के अंधियारे कमरे को बघेली में ओबरी कहा जाता है | एक पूर्ण सुआपंखी घर में ओसरिया (पुरुषों के उठने बैठने की जगह), कोठरिया (ओसरिया के दोनों तरफ के कमरे), दरवाज़ा (ओसरिया से घर के अंदर वाले कमरों व ओसार की ओर जाने का रास्ता, इस पर एक बड़ा, मज़बूत और सुंदर दरवाज़ा लगा होता है), ओसार (ओसरिया की तरह ही एक दूसरी जगह जहां महिलाओं का उठना बैठना रहता है), पटहुन (ओसार की तरफ दरवाज़े वाले मध्य की दो दीवारों के बीच बने कमरे, इनमे प्रायः अटारी बनी होती है |), दुगही (आँगन को दो तरफ से बंधेज के लिए दुगही का निर्माण किया जाता है), दलान (मुड़हर का ओसार), ओबरी (मुड़हर में ओसार की तरफ खुलने वाले दरवाजे के कमरों को ओबरी कहा जाता है |) होते हैं | ओबरी में ही प्रायः सोबर दी जाती है जहां जच्चा बच्चे को जन्म देने के बाद बास करती है | इस मंगल ओबरी में सास, ननद और जेठानी के आलावा किसी अन्य महिला पुरुष यहाँ तक कि बच्चे के पिता का प्रवेश भी पूर्णतः वर्जित होता है ताकि प्रसव संक्रमण घर के अन्य सदस्यों तक और बाहर का संक्रमण जच्चे-बच्चे तक न पहुंचे | सोबरी में जाने वाली महिलायें साफ़-सफाई का विशेष ध्यान रखती हैं |

सोबर पोताई- बघेलखण्ड में सोबर को माँ की संज्ञा दी गई है | महिलाओं का मानना है की सोबर माई ही बच्चे को पूरे छः दिन तक अपनी कोख में रखती हैं | वह बहुत ही कुरूप, खून के थक्के और मांस के लोथड़े से सनी होती हैं | उन्हें अंधेरा प्रिय है, उनका छः दिन तक सोबरी में वास होता है | पुत्र जन्म के छठवें दिन ननद अपने हाथों से सोबर को पोतती है | भावज द्वारा ननद की पोंतहड़ी (पोतने का बर्तन) में नेग स्वरूप कंगन या अंगूठी डाल दी जाती है | इसे ही सोबर पोताई नेंग कहा जाता है | इस नेंग के बारे में पहले से नहीं बताया जाता | जब ननद सोबर पोत कर बाहर निकलती है तो उसकी सखियाँ और गाँव की अन्य

महिलायें पूंछती हैं कि उसे क्या मिला सोबर पोताई में ? तब ननद द्वारा वह नेग सार्वजनिक किया जाता है। छठी के दिन सोबरी के कपड़े सहित घर के सभी कपड़ों को गर्म पानी में धोया जाता है ताकि प्रसूति वाला घर कीटाणु मुक्त हो सके। साफ़-सफाई के बाद इसी दिन सोबर माई का अनुष्ठान रखा जाता है और उन्हें विदा किया जाता है। छठी के दिन महिलायें महाउर से दिवार पर सोबर माई सहित सुरुज भगवान का चित्र बनाती हैं और उनकी पूजा करती हैं। छठवें दिन तक बच्चे का नाजुक शरीर कुछ मज़बूत होता दिखता है, तो छठी का उत्सव का मनाया जाता है। इस उत्सव में जच्चा को गर्म पानी से नहलाया जाता है। नाउन द्वारा उसके नाखून काटे जाते हैं। पैरों में महाउर लागाया जाता है और फिर मायके से भाई द्वारा लाई गई चूनर पहन कर जच्चा छठी माता की पूजा करती है। बघेलखण्ड में सोबर और सूदक (मृत्यु के दिन से दशगात्र तक का समय) को एक जैसा ही माना जाता है। सूदक में शुद्ध होने में १० दिन लागतें हैं तो सोबर में ६ दिन। सूदक में दसवें दिन परिवार को कच्चा भोजन दाल, भात खिलाया जाता है तो सोबर में भी छठी के दिन कच्चा भोजन दाल, भात और कढ़ी खिलाई जाती है। वैसे सूदक में दसवें दिन और जन्म में छठी के दिन से ही घर को शुद्ध माना जाता है लेकिन पूर्ण शुद्धि दोनों में क्रमशः १३ वें और १२ वें दिन ही होती है। छठी के दिन ही बच्चे को पहली बार उसकी बुआ द्वारा काजल लगाया जाता है। यह काजल गाय के घी से तैयार किया जाता है। गाय के घी का दिया जलाकर उसके धुएं को हंसिये की धार वाले भाग में इक्कठा किया जाता है। फिर उसे गाय के घी में ही मथकर आँख में आंजा जाता है। इस तरह से बना काजल लगाने से बच्चे की आँख से बहने वाला पानी धीरे-धीरे बंद होने लगता है। काजर अंजाई और उसके नेंग के सम्बंध में यह गीत देखिये –

मांगयि ननद रानी कंगना काजर के अंजाई
इया कगना मोर माई बाप रे
न देबइ काजर अंजाई हो कगना ननदोई
इया कंगना मोर मयिके के बिढ़बा
न देबयि काजर अंजाई हो कगना ननदोई

पिपर पिसाई - प्रसूता को पुत्र जन्म के दूसरे दिन परसुतिहा पानी दिया जाता है, उसी दिन पीपर भी बाँट कर दिये जाने की परम्परा है। सोहर पर के दर्जनों दादरा गीतों में पीपर पीसने का उल्लेख मिलता है। जिनमे सास,ननद, जेठानी और देउरानी के पीपर पीसने का ज़िक्र हुआ है। सास पीपर पीसती हैं और बहू को देती है तब उसका नेग बनता है इस संबंध में गीत भी है जिसे पीपर पिसाई नेग-चार गीत या बधाई गीत कहा जाता है।

सासु जो आबइं पिपरी पिसन का
मागइ आपन नेंग
नेंग के बदले ठेंग देखउबइ
पिया गयें परदेस

उक्त गीत में सास को बहू द्वारा पीपर पिसाई के बदले नेंग न देने की बात परिहास में की गई है। ऐसा नहीं है कि हर जगह सिर्फ बहू (प्रसूता) को ही नेंग देना पड़ता है, पुत्र की मुंह देखाई के रूप में घर के सभी बड़े लोगों और रिश्तेदारों के द्वारा निछावर देने की परंपरा है। देखिये यह गीत -

मोरे ललना के माथे घुंघुर काले बाल
आजा जो अइहइं नेउछाबर करिहंय
मोरे ललना के आजी चूमइं दूनउ गाल
बाबू जो अइहइं नेउछाबर करिहंय
मोरे ललना के माया चूमइं दूनउ गाल

सोंठउरा- सोंठउरा यानी पौष्टिक आहार। वैसे बच्चे के जन्म पर हल्दी, करायल, चंसूर, अलसी, मेथी, सोंठ आदि के लड्डू देशी घी में बाँधने की परम्परा है किन्तु लोक में सबको सम्यक रूप से सोंठउरा ही कहा जाता है ऐसा क्यों ? परम्परा संवाहको से पूछने पर पता चला की लड्डू किसी का भी बने सभी में सोंठ की एक नियत मात्रा होती ही है। इसीकारण सभी प्रकार के लड्डू सोंठउरा कहलाते हैं। कुछ महिलाओं ने यह भी बताया की सही मायने में सोंठ का लड्डू ही सोंठउरा है जो जच्चा का शरीर पुनः पहले की तरह हिष्ट-पुष्ट हो जाय इसलिए बनाया जाता है। हर तरह के सोंठउरे की अपनी-अपनी विशेषतायें और फायदे हैं। जैसे हल्दी का सोंठउरा कमर को मजबूती देता है तो अलसी का सोंठउरा दर्द को दूर करता है।

सतइसा – बालक का जन्म होते ही घड़ी और नक्षत्र देखा जाता है। भारतीय परंपरा में 6 ऐसे नक्षत्र हैं जिनमे जन्म लेने पर सत्तइसा लगता है। उन नक्षत्रों के नाम हैं रेवती, अश्वनी, ज्येष्ठा, मूल अश्लेषा और मघा। इनमे प्रत्येक का काल 24 घंटे का माना जाता है। २४ घंटे में चार चरण होते हैं। बालक का जन्म किस चरण में हुआ है, इसके माध्यम से यह देखा जाता है कि उसका प्रभाव कितना है। इन नक्षत्रों के दौरान किसी बालक का जन्म होता है तो जन्म के दिन से सत्ताइसवें दिन शुद्धि क्रिया पूर्ण होती है। समान्य दिनों के जन्म में बारवें दिन बरहौं संस्कार कर शुद्धि हो जाती है। लेकिन मूल नक्षत्र के कारण यह शुद्धि सत्तइसा पूजने के उपरान्त होती है। लोक में सत्तइसा पुजाई २७ वें दिन २७ तरह के दाने और २७ तरह की लकड़ियों को मिट्टी के एक बर्तन में रखा जाता है। नाई इस बर्तन को यजमान के निर्देशानुसार ज़मीन में गाड़ देता है। बच्चे का पिता अपना बाल बनवाता है। जच्चा और उसके पति जुएँ (खेती के समय दो बैलों को जोड़ने का यंत्र) पर बैठ कर घड़े से गिरते बूँद-बूँद पानी से नहाते हैं। फिर दोनों विधि अनुसार अनुष्ठान में बैठते हैं तब कहीं जाकर २७ दिन बाद बच्चे का पिता पहली बार अपनी संतान की परछाई कटोरी में रखे तेल में देखता है।

आखत डलाई - छठी के दिन जच्चा अनुष्ठान उपरांत अपने बच्चे को गोद में लेकर आँगन में बैठती है और गाँव की महिलायें बारी-बारी से आखत (अनाज) जच्चा की गोदी में डालती हैं और बच्चे को आशीर्वाद प्रदान करती हैं। आखत डालने की रश्म के लिए गाँव में बुलावा दिया जाता है। आखत डालना लोक के अनुसार धरती पर अये नये जीव का समग्र रूप से स्वागत है। उसके भावी जीवन की मंगल कामना का

उत्सव है | बच्चे की मां गाँव की प्रत्येक महिला से अपने पुत्र के लिये आशीर्वाद मांगती है ताकि उसका जीवन मंगलमय हो | इस परंपरा का महत्त्व इस कहावत में प्रतिबिंबित है "का तू फलाने के छठी माँ आखत डालेऽ रहेऽ"? यह उक्खान तब ढीला जाता है जब कोई अपने से बड़े का नाम सम्मान व संबोधन के साथ नहीं लेता |

बरहौं संस्कार - संतान प्राप्ति के बारहवें दिन जो संस्कार अनुष्ठान किया जाता है उसे बरहौं संस्कार कहते हैं | इस दिन स्त्रियाँ सूर्य की पूजा करती हैं | नवजात शिशु की दीर्घ आयु, तेज, बल और विद्या की कामना करती हैं | इस दिन समस्त परिवार सगे-संबंधियों को भोज दिया जाता है | इसी दिन बालक का नामकरण भी किया जाता है | इस प्रकार पुत्र जन्म से शुरू होकर जन्म संस्कार बारहवें दिन पर आकर समाप्त होता है |

घाट पुजाई/कुआं पुजाई- घाट पुजाई में जल देवता की पूजा की जाती है और प्रसूता अपने स्तन से दो बूंद दूध जल देवता को अर्पित करती है और मन ही मन प्रार्थना करती है कि जिस तरह आप के पास अथाह मृदु जल है उसी प्रकार मेरे स्तन में भी दूध भरा रहे ताकि मैं संतान को पाल सकूं | जीवन चक्र को सफल बनाने में मैं भी भागीदार होऊं | लोक में प्रकृति द्वारा प्राप्त संसाधन का उपभोग करने के बदले कृतज्ञता ज्ञापित करने की नेक परम्परा रही है | लोक हर उस कण को अपना देवता मानता है, उसके प्रति कृतज्ञ है, सहृदय है, जो उसके जीवन यापन में सहयोगी है | ग्राम्य संस्कृति में सूर्योदय के साथ बिस्तर से उठते ही भू वंदना, जल वंदना, सूर्य को अर्घ्य दान सहित उपयोग में आने वाली सभी वस्तुओं और वनस्पतियों से पूछकर, निवेदन कर उनका उपयोग करना फिर आभार सहित उन्हें यथास्थान रखना नेक संस्कार माना गया है | यह दीक्षा हमें बचपन से ही दी जाती है | ग्राम्य संस्कृति में आज भी वनस्पतियों के यथाउचित उपयोग करने पर जोर दिया जाता है, न की दोहन पर | यहाँ तक कि रोज़ मर्रा के जीवन में उपयोग आने वाले औज़ार कुदाली, फावड़ा, हंसिया, खुरपी आदि के लिए एक निश्चित स्थान तय होता है, उन्हें प्रणाम कर उपयोग में लाया जाता है और आभार सहित वापस वहीं रखा जाता है | जड़ी बूटियों के संबंध में लोक मान्यता है कि उनसे पूछकर, उनकी प्रार्थाना किये बिना यदि उनका उपयोग किया गया तो वह दवा रूप में असरकारी नहीं होती | यह अंधविश्वास नहीं बल्कि लोक के सहज, सरल, भावपूर्ण और कृतज्ञ होने की नेक परिपाटी का परिचायक है | एक सोहर गीत के अनुसार कुआँ पुजाई संस्कार नवबधू और नवजात शिशु का जल स्थल से परिचय कराना है | उसके कोरे में आये नन्हे जीव का, परिवार द्वारा उपयोग में लाये जा रहे जल स्थल से परिचय कराना है, भेंट कराना है ताकि दोनों एक दूसरे को जान सकें | कुआं पूजने से पूर्व तक नवबधू कुएं पर पानी के लिए नहीं जाया करती, यह उसका प्रथम परिचय होता है | एक तरह से परिवार की मालकिन उसे यह कार्यभार सौंपती है | संतान प्राप्ति के बाद से बहुएं स्थानीय देवताओं और ग्राम्य देवताओं की अर्चना, सेवा की ज़िम्मेदारी ग्रहण करती हैं | उसके पहले तक उसकी सास की पूर्ण ज़िम्मेदारी होती है | इसी तरह पीढ़ी-दर-पीढ़ी यह अनुष्ठान आभार सहित हस्तांतरित होता रहता है |

जनकसुता होरिल लइ कोरबा
हथबा कुसुम आखत हो

अब घाट पूजन का जाइं
मनहि मन सुमिरइं हो
जल सामी ओगरेऽ जइसइ जलबा
राखेऽ पति हमरिउ हो
अब ओईसइ ओगरइ दुधबा
ललन मोर बाढ़इं हो

ओगरना - प्राप्त होना , जिस प्रकार कुएं में जल का रिसकर इकट्ठा होना ओगरना है, उसी प्राकार मां के स्तन में दूध आना जिससे माँ बच्चे को स्तनपान कराती है उसे दूध ओगरना कहते हैं।

पछीत बोलनी- प्रसूता का देवर लड़के को लेकर घर के पिछवाड़े चला जाता है और वहां से बोलता है कि – "भइया लड़िका बच्चा हमार, गुहु गंतरा तोंहार |" यह सुनकर बड़ा भाई छोटे भाई को यथाशक्ति नेग देता है | यह दो भाइयों के मध्य सामंजस्य और प्रेम को बनाये रखने, एक दूसरे का परस्पर सम्मान करने की परम्परा का परिचायक है | ऐसे उत्सव जीवन में कुछ विशेष क्षणों को, अपने अंदर समेटे रहते हैं जो उम्र भर कभी नहीं भूलते | ऐसी ही भावपूर्ण यादें भाइयों को एक दूसरे के प्रति ताउम्र प्रेम गाँठ में बांधे रखती हैं।

काजल पारना- आँखे सुंदर, बड़ी और स्वस्थ्य रहें इसके लिए काजल लगाया जाता है | इसे जिस विधि द्वारा बनाया जाता है उसे लोक में 'काजल पारना' कहते हैं | इस विधि से बना काजल आखों के लिए बहुत फायदेमंद होता है | पहले मिट्टी के दिए में गाय के घी का दिया जलाया जाता है | जलते दिए के ऊपर मिट्टी या स्टील का कोई कटोरा रख दिया जाता है | घी खत्म होने तक यह दिया जलता रहता है और दिए से निकलने वाला धुआं ऊपर वाले बर्तन में जमता रहता है | सुबह इस जमे धुएं को निकालकर सरसों के तेल में अच्छी तरह फेंट कर कजरौटी (काजल रखने का लोहे का पात्र) में रख लिया जाता है | काजल बनाने के इसी विधि को काजल पारना कहते हैं |
अंजन-

लोकगीतों की व्याख्या का क्रम अंतहीन होता है, लोकगीतों में वर्णित विषयों की महत्ता, कल्पनाओं के आकाश से यथार्थ के धरातल पर बनते बिम्ब, अलंकारों का सहज ताना-बाना, अभिव्यक्तियों में छुपी सामाजिक मर्यादा का दायित्व बोध और देशकाल की सजगता को देखते हुए हम इनके सर्जना भाव और सर्जक मन को सहज ही समझ सकते हैं, टटोल सकते हैं | कलाकार खुद को छुपा सकता है लेकिन उसकी कला, उसकी सर्जना उसके आस्तित्व की तटस्थ गवाह होती है | लोक गीतों की सर्जना तो भावों में है, जितनी बार और जब-जब इन गीतों को महिलायें गा रही होती हैं, तब-तब इनकी रचना हो रही

होती है। हर पात्र अपने अनुरूप इन्हें रचता जाता है अपने भावानुरूप और इनके मार्फ़त अपनी भावाभियक्ति करता है। बघेली सोहर गीतो में प्रेम, नारी सौन्दर्य, पुत्र लालसा, बाँझपन और पति वियोग की मार्मिकता और कारुणिक अभिव्यक्ति दूसरे अन्य गीतों में नहीं मिलती। सोहर गीतों में कहीं-कहीं नारी अत्यंत निराश एवं व्यथित रूप में अवतरित होती है, लेकिन समाज और जीवन के प्रति उसका एक पल के लिए भी मोह भंग नहीं होता। महिला गीतों में सोहर को नारी मनोभावों का स्पष्ट दर्पण कहा जा सकता है, जहां नारी के ह्रदयस्थ भावों के प्रतिबिम्ब देखे जा सकते हैं। इन गीतों में साहित्यिक रसमयता, विचारत्मकता और मार्मिकता तो है ही साथ ही यह गीत संस्कृति एवं समाज की दृष्टि से ये अपनी स्थानीय संस्कृति, सामाज और संस्कारों को परिलक्षित करते हैं। जितना ही हम इनकी तह में जाते हैं उतना ही इनका मूल्य स्पष्ट होता जाता है।

अधिरतिया के लागत
कोइली कुहूकइ हो
अब छतिया रेतइ ओखर बोली
ता भल कइली कुहूकिउ हो
हमका निबल का तू सताएऽ
जगायेऽ अधिरतिया हो
अब साइत कुसाइत न चलाबा
दुइधारी तलबरिया हो

विरह की विभिन्न मार्मिक व्याथाओं से ओत-प्रोत इन सोहर गीतों में समूचे समाज की व्यथा के दर्शन होते हैं। विरह वियोग की स्थिति में नारी मन में किस-किस तरह के उद्वेग उत्पन्न होते हैं सोहर की यह पंक्तियाँ उसे परत दर परत खोलती हैं। विरहाग्नि में वर्षों से जलती नायिका तन-मन से इतनी दुर्बल हो चुकी है कि कोयल की मीठी आवाज़ उसकी विरहाग्नि को और प्रदीप्त कर रही है। वह कोयल से कहती है कि – हे कोयल आधीरात को तुम बोल कर मेरा ह्रदय न जलाओ, तुम्हारी यह कूक मेरा ह्रदय रेत रही है। मैं कामाग्नि में पहले से ही जल रही हूं और ऐसे में तुम भी मेरा साथ देने की बजाय असमय कूक रूपी दोधारी तलबार चला रही हो। मैं समझ गयी कोयल कि निबल (कमज़ोर) को सभी सताते हैं।

मुरगा तोखा ख़रीदेऽन अकाले
सेयेऽन दुकाले हो
अब तू ता भयेऽ हा जबान
चुगा न मोर मोतिया हो

पति बारह वर्षों से घर नहीं आया, कामाग्नि में तप रही नायिका मुर्गे से कहती है कि - मुर्गा मैंने तुम्हे अकाल दिनों में पाला और दुकाल के दिनों में तुम्हारी सेवा की है , अब तुम पूरे जवान हो गए हो। अब तुम मेरी सेज पर आओ और यौवन रूपी मोती को चुगकर मुझे तृप्त करो। नैसर्गिकता का इतना अच्छा उदाहरण और कहां मिल सकता है। सोहर गीतों में ऐसे कथानको की भरमार हैं जो, नारी मन की पीड़ा को प्रकट करते हैं।

उज्जर बत्तीसी केर धनिया
तोंहर रहिया ताकइ हो
अब आइ जातेऽ मोर अटरिया

सेजरिया ता सूनि हइ हो
राजन अब भयेऽन पूर जवान
देहिया तपइ लाग हो
अब अंगिया मा अंग न समाइ
सेजरिया मा देहियां हो
होइ कुआं पिया नाकी
सागर नहीं नाका जाइ हो
अब रहि-रहि छलकइ रामा
जोबन केर गगरी हो
अब कउन-कउन भमर लोभाइ
कुसुम रस लेइहीं हो

१. उज्जर- सफ़ेद

२. नाकि - लांघना

हास-परिहास की बातें ख़त में लिखती नायिका परदेशी पति से कहती है कि- तुम मुझे बारह वर्ष की उम्र में व्याह कर लाये, फिर अकेला छोड़ परदेश चले गए | तुमने बारह वर्ष से मेरी सुध न ली, देखो अब मैं पूरी जवान हो गयी हूं, मेरी चोली में मेरा स्तन नहीं समाता और न ही बिस्तर पर यह देह | प्रिय ! कुआं होता तो लांघ जाती पर जवानी रूपी इस समुद्र को लांघना मेरे वश में नहीं | यौवन की गागर रह-रह कर छलक रही है, जाने किस दिन मेरा शील छूट जाय | तुम जल्दी आ जाओ नहीं तो जाने कितने ही भ्रमर इस कुसुम का रस लेने को लालाइत हैं | हास-परिहास में नायिका इतनी गंभीर बात कह जाती है, आज भी परस्त्री पर जाने कितने भ्रमरों की नज़र होती है |

अगने मा राखिउ माया बेला
दुआरे चमेलिया हो
अब धेरिया बिआहेऽ सउ कोस
जनम बइरिनिया हो
चला उड़ि चली सखिया सलेहर
चला न केदली बन हो
अब हमका बिआहन आयें राम
पइ हम नहीं जाबइ हो

१. धेरिया - पुत्री

माँ तुमने बेला के पौधे को आँगन में अपनी देख-रेख में आँखों के सामने लगा रखा है | चमेली के पौधे को द्वार पर बाबू की देख-रेख में लगा रखा है फिर अपनी प्राण प्यारी बेटी को घर से कोसों दूर क्यों व्याह रही हो | माँ, क्या मैं तुम्हारे पूर्व के जन्मो की दुश्मन हूँ ? क्या तुम मुझसे इस तरह बैर निभाओगी ? सखी चलो केदली वन की ओर उड़ चलें | राम मुझे व्याहने आ रहे हैं पर मैं उनके साथ नहीं जाउंगी | बेटी माँ-बाप को छोड़ना नहीं चाहती और सामाजिक मर्यादाएं उसे पीहर में रहने की अनुमति नहीं देतीं | अंततः लडकी माँ-बाप को छोड़कर कहीं दूर चली जाती है | जहां से वो लौटकर कभी नहीं आती | वैसे भी माँ बाप बेटी को ससुराल बेटी रूप में ही भेजते हैं मगर उसके बाद से वह कभी उनकी वही पुत्री नहीं रह जाती | एक सोहर गीत में भाई अपनी मां से पूछता है कि माँ, दीदी को क्या हुआ ? अब वो पहले की तरह जिद नहीं करती,

मुझसे लड़ती नहीं | क्या आपने उन्हें कुछ कहा है ? ऐसा ही एक और सोहर गीत जिसमें बेटी अपने पिता को ख़त लिखकर कहती है कि - बाबू जी मैं तो घर में खेलने-कूदने और फुदकने वाली गौरैय्या की तरह थी फिर आपने इतनी दूर अनजाने देश में अनजाने व्यक्ति के हवाले क्यों कर दिया | वह कन्यादान के समय का ज़िक्र करती हुई कहती हैं कि कोई बाप इतना कठोर कैसे हो सकता है कि अपने ही अंश बेटी को किसी अनजान के हाथों स्वाभिमान रक्षा के लिए बेंच दे | बाबू जी आप में और उस बहेलिये में कोई अंतर नहीं जो आज़ाद पंछियों को कैद कर व्यापार करता है | उन्हें अनजान देश में अनजान लोगों के हाथ चंद पैसों के लिए बेंच आता है | इतना ही नहीं बाबू जी आपने घर में मेरे हिसाब से रखी सारी चीज़ों को भाई के हिसाब से क्यों कर दिया है ? ऐसा कर के क्या आप एक ही जीव को दो अलग-अलग देह में नहीं बांट रहे ? भाई और मां के साथ पीहर में बिताये उन तमाम दिनों की याद को एक-एक कर कुरेदती बेटी की नज़र चंदन के पेड़ पर जाती है | उसे देख वह रोने लगती है और कहती है कि – बाबू जी आपने इस पर डला झूला क्यों निकलबा दिया ? आप जानते हैं कि मैं इस पर बैठ कर सपने देखती थी | आपने मेरे सपने की आख़िरी उम्मीद भी नही छोड़ी ? ख़ैर कोई बात नहीं बाबू जी अब मै गर्भ से हूँ और मेरे पेट में भी मेरी ही तरह एक बच्ची पल रही है | मैं नहीं जानती कि मै इसका क्या करूंगी, लेकिन भाई से कहना कि मेरे लिए वह चूनर लेकर आये |

एक अभागिन गइया
खूंटा काहे आबइ हो
अब बछड़ा के परा रे अकाल
कहइं सब ठठिया हो
एक अभागिन चिरई
खोथउना काहे आबइ हो
अब चुनगुन के परा हो अकाल
कहइं सब बिरइया हो
एक अभागिन तिरिया
ससुररिया काहे आबइ हो
अब होरिल का गई तरसाइ
कहइं सब बझिनिया हो

१. **ठठिया, ठाठ - बाँझ, वंध्या**
२. **खोथउना, खोथा - घोसला**
३. **चुनुगुन - चूजे**
४. **बिरइया - चिड़िया बाँझ हो तो उसे बिरइया कहा जाता है |**

कोई गाय खूंटे से क्यों बंधी है ? इसमें उसका क्या स्वार्थ है ? उसके पास तो शब्द भी नहीं कि वो अपने भावो को अभिव्यक्त कर सके | मानव अपने स्वार्थ के लिए उसे खूंटे से बांधता है फिर उसे बहिला, ठाठ कहकर संबोधित करता है | कोई चिड़िया अपने खोंथे में क्यों आती है अपने निहित स्वार्थ के लिए ? नही, प्रकृति का संतुलन बना रहे, इसलिए वो सम्भोग करती है, मानव की तरह शारीरिक सुख के लिए मानवेतर में सम्भोग नहीं होता | यदि चिड़िया को चुनगुन न हुआ तो उसे लोग बिरइया कहते हैं | कोई लड़की ससुराल क्यों आती है ? क्या उसका कोई निजी स्वार्थ होता है ? नहीं वह अपने माँ-बाप का आँगन छोड़कर पिय के देश इसीलिए आती है कि प्रकृति के संतुलन में भागीदार होगी, लेकिन यह निर्दयी समाज उसे बाँझ कह ताने मारता है |

चिरई कस बाबू घर खेलेऽन
चुनूगुन कस फुदकेऽन हो
अब खेल-कूदि आयेऽन ससुरारि
पय उआ दिन नहीं बहुरें हो
बइरि तरी ससुरे के हिंडोलना
ता नीम तरी नइहरे के हो
अब बइरि छेरिया चरि जाइ
लहरइ नीम डरिया हो

हे सखी ! मैं अपने बाबुल के घर पर चिड़िया की तरह आँगन में खेलती थी, फुदकती थी | लेकिन ससुराल आकर वह सब जाने कितना पीछे छूट गया है | उम्र ढलने चली पर वे दिन वापस नहीं आये | ससुराल के सुख-समृद्धि का झूला बेर की डाल पर पड़ा है और नइहर का नीम की डाल पर | बेर के पत्ते बकरी खा गई, लेकिन नीम पर पड़ा नइहर का झूला आज भी हिलोरे ले रहा है, और नीम की सीतलता मेरे लिए इस ढलती उम्र के लिए भी बरकरार है | नइहर और ससुराल के अंतर को स्पष्ट करने के लिए इतनी सहज, सरल और मार्मिक उपमा लोक ही दे सकता है | ससुराल का सुख नव बधू के लिए थोड़े दिन के लिए ही होता है, नइहर का मान, सम्मान, प्रेम नीम के पेड़ की तरह है जो बारहों महीने शीतल बयार देता रहता है | बेर के पत्ते को बकरी खा गयी यानी समय के साथ सुख के मायने बदल जाते हैं पर नीम का पेड़ बारहों महीने, अपने दुःख के समय (पतझड़) में भी नीचे बैठे व्यक्ति को शीतलता प्रदान करता रहता है |

छापक पेड़ छिउलिया
ता पतबन गहबर हो
अब उहीं तरी ठाड़ि हरिनिया
मनइ अति अनमन हो
चरतइ चरत हरिनबा
हरिनी से पूछइ हो
हरिनी का तोर चरबा झुरान
धउं पानी बिन मुरझेऽ हो
राजा नहीं मोर चरबा झुरान
न पानी बिन मुरझेऽन हो
हरिना आजु रमइया जी के छठिया
तोंहका मारि डरिहीं हो
छोड़ा अजोध्या के राजि
नंदन बन चलि चला हो
भल बउरानी हरिनिया
तोंहका के बउराइस हो
मासु केर रचिहीं जेउनार
ता खाल साधु पइहीं हो
मचिअइ बइठी कोसल रानी
हरिनी अरझ करइ हो
रानिया मसुआ ता सिझइ रसोंइया
खलरिया दइ देतेऽ हो

पेंड़बा मा टांगब खलरिया
अउ मन समझउबइ हो
रनिया खलरिन आपन पिया मनबइ
अउ हिय से लगउबइ हो
जाहु हरिन घर अपने
खलरिया नहीं देबइ हो
हरिनी खलरी के डफुली मढ़उबइ
रमइया मोर खेलिहीं हो
रामा जब–जब बाजइ डफुलिया
हरिनिया ता अनकइ हो
अब महल पछितिया हरिनिया
बाउर भई बागइ हो
हरिनी ठाढ़ि ढकुलिया के खाले
ता हरिना बिसूरइ हो।

यह बघेली लोकगीत सामंती क्रूर व्यवस्था का मुकम्मल इस्तिहार है। लोक पर इंद्र सत्ता का दबंग दबाव था कि सबके मुह बंद थे। किसी में इतना साहस और सामर्थ नहीं था कि अपने प्रति हो रहे घोर अन्याय के विरोध में सत्ता से फ़रियाद कर सके। हिरना और हिरनी के कथानक के माध्यम से तत्कालीन सामंती आचरण की झांकी प्रस्तुत की गई है। राजा के लाड़ले का अन्न प्रासन (पसनी) संस्कार होना है। निर्दोष हिरना मारा जाएगा। प्रिया हिरनी चिंतित है। राज सत्ता का इतना आतंक है कि वह बोल नहीं सकती। प्राण भिक्षा का भी उसे अधिकार नहीं मिला है। वह देश त्याग करना चाहती है। हिरना जानता है कि उसे देश त्याग करने का भी अधिकार नहीं है, इसलिए हिरनी की पलायन योजना से सहमत नहीं होता। लचार हिरनी अपने प्रिय के लिए रानी से विनती करती है रानी !हिरना की मांस तो रसोई में पाक जायेगी, खाने के काम आ जायेगी किन्तु हिरना की खाल हमें दे दीजिये, मैं उस खाल को पेड़ पर लटकाकर नित्य देखूंगी, मन को समझाउंगी की हिरना जीवित है किन्तु हाय रे सत्ता का मद, हिरनी की आर्त पुकार अभिमानी रानी ने कहाँ सुना। रानी उत्तर देती है –हिरना की खाल मृदंग पर चढ़ेगी जिसे मेरा लाड़ला राम बजायेगा। यह शोषण और अनीति की पराकाष्ठा नहीं तो और क्या है ? निरीह हिरनी कर ही क्या सकती है ? हिरना की खाल से बनी खंजरी जब-जब बजती है हिरनी किसी वृक्ष के नीचे खड़ी होकर उसकी आवाज़ सुनती है, महल की ऊंची-ऊंची दीवारों को वह कहां लांघ पाती, पागलों की तरह खंजरी की आवाज़ के पीछे भागती वह एक दिन जान दे देती है। यहाँ हिरनी नारों और नगाड़ों के बीच खड़ी मूक जनता है जिसे राजसत्ता उसके कर्तव्य का बोध कराती है लेकिन उसके अधिकारों से वंचित रखती है। हम अमानवीय भयंकरता के युग में जी रहे हैं। आज हमारा जी आहत हम कुछ बोल नहीं पाते

झुरान - सूखना
सिझइ - पकना
अनकइ - सुनना
बागइ - घूमना

जब वीरन आयें ओबरिया
ता होरिल उठावहिं हो
ललना मनइ-मन अदिति मनाबइं

हमार पत राखेऽ हो
पुरुबइ का उअत अलरबा
ता जलबा चढ़ाइन हो
अब अंचरा से करन दुलरबा
भर मुख वर मागन हो
हथबा बीरन लिहे ललना
जू मुहबा उघारइं हो
अब ठुनुक–ठुनुक ललना रोमइं
सुरुज मोर पत राखिन हो
बहि चलें नैनन नीर
निकरि नीक लागइं हो
आजु भर मन रोयन ललनबा
ललन सुख पायन हो
ललना होइ गएँ जियरा कठोर
सब सुख तजबइ हो

ओबरिया, ओबरी - कमरा
अलरबा - कोमल
उघारइं - खोलना
नीक - अच्छा

व्याख्या - बाँझ की दशा समाज में क्या रही है और आज भी क्या है, उसके मर्म को इस सोहर गीत से बेहतर और कोई नहीं कह सकता | लम्बे-लम्बे केशों वाली बधू बाँझ है, वो घर आयी दासी की गोद में बालक देखकर दासी से उसे अपने कोरे में उठाने का निवेदन करती है | लेकिन दासी साफ़ मना कर देती है और कहती है कि- रानी, चाहे तुम मुझे अपने घर की नौकरी से निकाल दो या राज्य से, लेकिन मै तुम बाँझ की गोद में अपना बालक नहीं दूंगी | ठीक है दासी, यदि तुम्हारे नन्हे बालक का मुझ बाँझ के छूने से कोई बुरा होता हो तो मै उसे नहीं छूऊंगी | पर हे दासी, मेरा स्त्री मन नहीं मानता, मुझे भी तो ममत्व का हक़ है | क्या मै ताउम्र किसी बालक को गोद नही ले सकती ? दासी, मेरे घर के पिछवाड़े मेरे भाई जैसा मेरा ख्याल रखने वाला बढ़ई है, तुम जाकर उनसे कह दो की उसकी रानी बहन ने कहा है कि उसके लिए एक काठ का बालक बना दें | बढ़ई अपनी रानी बहन के कहने पर काठ का बालक बनाने लगता है | वह उसका हाथ-पैर बनाता है, पेट बनाता है और जब वो बच्चे का मुह बनाता है तो उसकी आँखों से आसूं छलक पड़ते हैं | वो पास ही बैठी अपनी पत्नी से कहता है कि मै इस काठ के बालक में प्राण कैसे डालूँगा ? न चाहते हुए भी बढ़ई अपनी रानी बहन की गोद में काठ का बालक छोड़ आता है | बहू काठ के बालक को अपनी कोख से जना बालक मानकर खुशी से झूम उठती है | वर्षों से निसंतान होने और समाज के ताने से घायल वो और क्या करती, दौड़कर सास से जा कहती है कि- सासू माँ, मुझे बालक हुआ है जल्दी से मेरे मायके संदेशा भिजवा दीजिये | मेरे भाई को रोचना भिजवा दीजिये | ननद और सास को बहू की मायके वालों से बदला लेने का यह अच्छा मौक़ा जान पड़ता है और वो तुरंत नाई को रोचना और चामार को बधाव लेकर बहू के मायके भेज देतीं हैं | नई बहू के मायके पहुचता है, नाई के हाथ में रोचना देखकर लड़की की मां को भरोसा नहीं होता की अचानक कैसे बेटी को सन्तान की प्राप्ति हुई | कल

तक ससुराल वाले उसे बाँझ कहकर ताना मारते रहे हैं और आज रोचना और बधाव भेज दिया। पर कोई माँ अपनी बेटी अपनी संतान को निःसंतान कैसे देख सकती है ? बेटी के पुत्र प्राप्ति के सुख के आगे एक माँ को और सब बातों की सुध कहां, उसे समाज के कुचालों का ध्यान कहां, उसे उचित अनुचित भान कहां ? वह जाकर चौसर खेल रहे अपने पुत्र से कहती कि बेटा, इस खेल के आगे तुम अपनी दुलारी बहन को भूल गए ? तुम्हारी बहन को बालक हुआ है, जाओ बहन के लिए छठी पुजाई का समान और चूनर ले जाओ। इधर जब बहन को पता चलता है कि उसका भाई छठी पुजाई का सामान लेकर आ रहा है तो अचानक उसका स्वप्न टूटता है, वो बुराई से इधर-उधर ताकने लगती है, और उसके हाथ से काठ का बालक गिर जाता है। वह रोने लगती है और सोचती है कि- हे ईश्वर मैंने यह क्या किया आज भरे समाज में मेरे प्यारे भाई और माँ-बाबू का सब उपहास करेंगे। इस स्थिति में उसे कुछ समझ नहीं आता आखिर वो अपना दर्द किससे कहे यहाँ तो अपने ही उसे प्रताड़ित करने वाले हैं। वो मन ही मन सूर्य भगवान की प्रार्थना करने लगती है। हे आदिति- मैंने आपको नित्य अर्घ्य दान किया है। आप सीतलता ओढ़ कर पूर्व से पश्चिम की यात्रा कर ले इसलिए जल चढ़ाया है। मैंने आप से आज तक कुछ नहीं माँगा आज मेरी पत राखो आदिति आज मेरी पत राखो। आदिति मैं तुम्हारे माँ की तरह ही तुम्हे अर्घ्य चढ़ा कर तुम्हे सीतलता प्रदान की है आज इस संकट की घड़ी में अपने माँ की लाज राखो। बस एक बार आदिति बस एक बार यह काठ का बालक रो दे। इसके आलावा इस जीवन में मैं तुमसे कभी कुछ नहीं मांगूगी। अपने मन से सदा-सदा के लिए पुत्र प्राप्ति की लालसा निकाल दूंगी। हे आदिति , बस एक बार वह काठ का बालक रो पड़े। और इधर भाई ने दालान में कदम रखा, उसे गोंद में लिया और जैसे ही उसने बालक के मुख से चादर हटाई काठ का बालक रो पड़ा। बहन आदिति का ध्यान करती रही और बालक रोता रहा। भाई उसे चुप कराने के उपक्रम करता रहा लेकिन बालक चुप होने का नाम ही न ले। पूरा गाँव यह दृश्य देख भौचक था, आज सब काठ हो गए। बस तीन जीवों में ही संवेदना बची थी। भाई, बहन और काठ का बालक। बहू रोती रही और कहती रही हे आदिति, आज मैं भी जी भर के रोई अब मुझे जीवन का कोई और कष्ट नहीं रुला सकता। मैं सदा-सदा के लिए काठ हो जाती हूं। न कोई लालसा न कोई उम्मीद। आत्मा को झिंझोड़ देने वाला, व्यथित कर देने वाला यह सोहर गीत लाखों लाख ज़बानों से होकर हम तक पहुचा है। जाने कितने भाव, कितने अर्थ हैं और कितनी ललनाओं अनकही अंतर कहानिया इसमे छुपी होंगी।

कुछ जन्म संस्कार गीत –

ननदी पोथिया मोर बाँचे अउ कंस का बतामइ हो
राजा देबकी के भये हाँ गरभबा देबकी पूत मारेऽ हो
नउ मन लोहा चुनउबइ चकरी बनउबइ हो
अब देबकी से कोदउ दरउबइ गरभ गिरबउबइ हो
नउ मन लोहबा गलउबइ गगरी बनबउबइ हो
अब देबकी से पनिया भरउबइ गरभ गिरबउबइ हो
पनिया भरन गई देबकी ता बइठीं करारे चढ़ि हो
अब देबकी के रोये ता ललनबा जमुना बढ़ी आमा हो
बनबा से निकली जसोदा देबकी समुझाबाँ हो
बहिनी कउन दुःख राम तोंहका डारे कारन कइ रोइउ हो

बहिनी सासु-ससुर दुःख तोरे कि नइहरे बसइ दूर हो
बहिनी की तोर कंत बिदेस कउन दुःख रोइउ हो
बहिनी सासु-ससुर दुःख नाही न नइहरबा दूर बसइ हो
अब न मोर कंत बिदेस कोखिया दुःख रोयेऽन हो
सात होरिल राम दिहिन ता सातउ कंस मारिस हो
बहिनी अठमे गरभ अउतार इहउ कंस मरिहीं हो
सनका न रोबा मोर बहिनी न रोइ-रोइ मन मारा हो
देबकी अपन ललन हम देब तोंहर लइ अउबइ हो
नोनबा ता मिलइ उधार अउ तेलबा उधार मिलइ हो
बहिनी कोखिया के कउन उधार रमइया हमसे रूठे करम मोर रूठि गयें हो
बहिनी तोर कोखि मोर कोखि होइहीं जतन कउन करबू हो
बहिनी कंस जो मारी ललनबा पाप कहाँ धरबइ हो

राजा दुआरे ठाढ़ि रनिया ता रनिया रुदन करइ हो
राजा मय ता जोगिन होइ जइहउं ता एक ललन बिनु हो
रनिया जो तू जोगिन होइ जाबेऽ जोगिया मय होबइ हो
रनिया दुनउ जने धुनिया रमउबइ ता तीरथ नहाबइ हो
गया जी नहाइन गजाधर अस्नानिन बेनीमाधव हो
राजा एतना तीरथ कइ डारेऽन ललन नहीं पायेऽन हो
चारि चउखण्ड तलरिया तलरिया बीच चंदन बिरिछ हो
अब ओहीं तरी राम जी के आसन ललनबा उरेहइं हो
बोलिया ता बोली भगबान बोलत मा सरम लागइ हो
राम सगले नगरिया पइरी छुनकइ मोर घर सून परा हो
सगले नगर किलकरिया तोहर कउन गति रानी हो
रानी जउन लिखा हइ लिलरबा उहइ गति होइहीं हो

उठतइ रेख मस भीनत रमइया मोर बन चलें हो
मोर बारा बरिसि के उमिरिया कइसे पार लगिहीं हो
का राम तोंहरे महल गये अउ का बिदेस गये हो
कबहूँ हंसि के न पकड़ेऽ अंचरबा न कबहूँ रिसानेऽ हो
लालि चुनरि नहीं पहिरन पियर नहीं छोरेऽन हो
रामा कोखिया न लिहेऽन होरिलबा छठिया नहीं पूजेऽन हो
सोनबा महल भर छोड़ेऽअउ रूपबा अटारी भर हो
अब छोड़ेऽ तू लहरू देबरबा केखर संग बिंहसबेऽ हो
आगी लागइ सोनबा महल भर रूपबा महल भर हो
रामा तोरे बिना सकल धुधुरिया पिया के संग बिंहसब हो

करिया पियरिया बदरिया झिमिक-झिम झिरखइ हो
बदरी जाइके झिरिखा ओहीं देस पिया जी जहाँ बसिगीं हंइ हो

पियबा के आखर-बाखर भींजइ भींजइ तमुआ कनात सब हो
अब भितरे से हुलसइ करेजबा समुझि घर आबइं हो
बरहइ बरिस राम लउटें ता बर तरी उतरें हो
ओनखर माया उठी लइ पिढ़बा बहिन गडुआ पनिया हो
मोर पिया पनिया ता पिअइं हाथ-गोड़ धोबइं हो
माया देखेऽन मय कुल परिवार धनिया नहीं देखेऽन हो
लाला तोंहर धनि अंगबा के पातरि मुखबा के सूनरि हो
बहुआ गोड़े-मूड़े ताने पिछउरी अटरिया मा सोबइं हो
खोला न बहुआ केबरिया सुरुज तपइ लागें हो
बहुआ देखा न तोंहर परदेसिया लउटि घर आयें हो
जचकि किबाड़ धनि खोलइं रमइया दुअरा ठाड़े हंइ हो
रमऊ जनतिउं जो तोंहर अबइया मोरिन बनि नचतिउं हो
रमऊ जब से तू गयेऽ बिदेसबा सेजरिया नहीं दासेऽन हो
अब ससुरू के तपेऽन रसोंइया भुइयां पर सोयेऽन हो
जब से बिदेस गयेऽन धनिया पान नहीं खायेऽन हो
धनिया तोहरइं दरद लइ सोयेऽन तोंहारइ लइ जागेऽन हो
साबन बदरिया चिठिया बांचइ भादउं मन हुलसइ हो
धनिया रतिया नेहिया उमड़ि आबइ जियरा पीऊ-पीऊ बोलइ हो

सुखिया-दुखिया दूनउ बहिनी बधइया लइके आई हो
बीरन तोंहरे भये नंदलालता मन मोर हरसइ हो
सुखिया ता लाई गोड़हरा अउ दुखिया दूबि करधन हो
अब बीरन से पूछइं सुखिया हमहि बिदा भेजतेऽ हो
लइलेऽ बहिनी आँचर भर मोतिया अंजुरी भर सोनमा हो
बहिनी पिया चढ़इ का घोड़बा भयन का मिठइया हो
दुखिया बहिन कहइ बीरन बिदा हमहू भेजतेऽ हो
बिरना रोबत होइहइं तोहर भयनबा अकेल कुंदिरबा हो
लइलेऽ बहिनी आँचर भर कोदउ अंजुरी भर सामा हो
बहिनी लइलेऽ उहइ दूबि करधनिया भयन पहिरायेऽ हो
गाउं दुखिया डांकि नहीं पाइन अँचर मोती झरइ लागें हो
अब दूबि करधनिया भइ सोनमा दुखिया भाग फिरिगीं हो
ऊंचे अटरि चढ़ि भउजी बलम गोहरामइं हो
बलमू ननदी रिसाइ चली जात ओन्हइ आनि लाबा हो

बाबा मोर बिअहे राजा घर कि अनधन महल भरा हो
मोर माया न लिहिन खबरिया बीरन नहीं पठइन हो
सासू कहइ तोर माई नहीं ससुर जी कहइं तोर बाबू नहीं हो
अब पिय जी कहइं तोरे बिरना नहीं जउन तोखा आनइ हो
बड़ी गरबीली सुना बहुआ गरब लइके ओढ़ा हो

तोंहरे बिरना जू होतीं माया ता आनय तोखा अउतें हो
एतना बचन सुनि बहुआ सुरुज का मनाबइं हो
सुरुज भइया के होतें नंदलाल ता मौरे घर अउतें हो
होत बिहान भिनसारे होरिलबा जनम लिहिन हो
अब बाजइ लागीं अनद बधइया गाबइं सखि सोहर हो
बाबू मोर गये हाँ बेढ़इत घरे बेसहइ ओन्हा हो
अब माई मोरि पियरी रंगामा बीरन लइ के आमा हो
भउजी मोर चाउर पिसामइं ढूड़ी बधबामइं हो
अब भउजी मोर पुतरी उरेहइं बीरन लइ के आबइं हो
आगे-आगे आबइ कंहरबा ता पीछे घिउ गागर हो
अब ओहीं पाछे भइया असबार बहिन देस आमइ हो
जइसइ दउड़इ गइया बछेरबा का देखि के हो
अब ओइसइ दउड़इ बहिनिया बिरनबा का देखि के हो
का लइ के आयें बीरन सासु का ता का गोतिनी का हो
अब का लइ के आयें भयन का ता का लायें हमका हो
पियरी लइ आयेऽन सासु जी धोतिया गोतिन का हो
अब कड़बा गोड़हरा भयन का बहिनी कुछु नही लायें हो

सोने के खड़उंआ पहिरे राजा दसरथ खुटुर-खुटुर रेंगइं हो
अब गयें रामा बनमा केदलिया कंटबा गोड़े गड़ि गये हो
अरे जी मोर कंटबा निकारी पीरा हरि लेई हो
अब उआ जउन मागी मगनबाउहइ दइ देबइ हो
घरबा से निकली केकई रानी सोरहउ सिंगार करे हो
राजा हमहिन कंटबा निकलबइ बेदना हरि लेबइ हो
पिया जउन मागन हम मागब उआ मागन दिहे परी हो
अब गोड़बा के कंटबा निकालब पीरा हरि लेबइ हो
रानी जउन मगन तू मगबू उआ हम देबइ हो
अब गोड़बा के कंटबा निकाला पीरा हरि लेतेऽ हो
जउन मगन हम मागब उहइ देहे परी हो
राजा राम-लखन बन जाइं भरत पूत राज करइं हो
मागेऽ ता केकई रानी मागइ नहीं जानिउ हो
केकए मागि लिहिउ मोर परानमागन के आड़े हो
जउन राम चित नही उतरइं पलक नही बिसरइं हो
अब उहइ राम बन चले जइहीं जियब कइसे रनिया हो

ऋतु गीतों में नाटकीय तत्व –:

सावन का मनभावन महीना और कजरी (कजली)एक दूसरे के पूरक हैं , सावन लके गीत वर्ष भर याद नहीं आते लेकिन जैसे ही काले-काले बादल घिर आते हैं सारे विस्मृत गीत और गायकी याद आ जाती

है | कितना अनोखा मनोविज्ञान है यह ? इन तीन सालों में मैंने लगभग 530 ऋतू गीतों का संग्रह किया जिसमे से 150 के आस-पास वर्षा ऋतू गीत कजली, हिंदुली, बारहमासा और बाकी के कार्तिक स्नान, फाग और चैता के संग्रह हैं |सावन, झूला और कजरी को समवेत रूप में समझना है, पावस के साथ इनके अंतरसंबंधो को अनुभूत करना है तो वानांचल की ओर चले आइये | दादुर , मोर, पपीहा और इस मास का ग्राम्य जनजीवन खेतों में निरवाही करते कजली, हिंदुली का श्रम में लीन माधुर्य, तरुनिओं के झूले, हिंडोले गीत, नाव खेते नाविकों की ऊँची और लम्बी तान जो नदी के दोनों पाटो को अनंत में कंही समेत रही हैं | रिमझिम बारिश में आँगन से लेकर ऊंचे पर्वतों तक पसरी एकचक हरियाली में डूबा यह संसार कोई और ही लोक है |

मानव जीवन एवं उसके क्रिया कलाप के अंतर्गत ऋतुओं का विशेष महत्व है | भारत एक ऐसा देश है जंहा ऋतुएं भी सामान काल से होती हैं | यद्यपि परम्परा में छः ऋतुएं मानी जाती हैं , पर उत्तरी भारत में चार ऋतुएं प्रधान हैं-वर्षा, शरद, बसंत और ग्रीष्म | प्रकृति, मानव जीवन के दैनिक क्रियाकलाप, रीति-रिवाज, परम्पराएँ, यंहा तक सम्पूर्ण भारतीय संस्कृति ऋतुओं के अनुसार और आधार पर विभाजित है, प्रवाहमान है |लोक साहित्य में ऋतुओं और ऋतू गीतों की सुन्दर रचनाये हैं जो अपने उर में अनगिनत कालों का बोध समेटे हमारे जीवन का अभिन्न अंग बनी हुई हैं | ग्राम्य संस्कृति तो इनके बिना मृत प्रायः है | लोक साहित्य का अभिप्राय उस साहित्य से है जिसकी रचना लोक करता है। लोक-साहित्य उतना ही प्राचीन है जितना कि मानव, इसलिए उसमें जन-जीवन की प्रत्येक अवस्था, प्रत्येक वर्ग, प्रत्येक समय और प्रकृति का एक-एक अंश समाहित रहता है | लोक अहंकार से शून्य है और एक परंपरा के प्रवाह में जीवित रहता है और यही कारण है कि लोक हर काल में सजग और परिवर्तन शील है | लोक ऐसी परम्परा का निर्वहन करता है जो खुद पर भी सवाल खड़े करने से तनिक नहीं हिचकिचाती | साधारण जनता से संबंधित साहित्य को लोकसाहित्य कहना चाहिए। साधारण जनजीवन विशिष्ट जीवन से भिन्न होता है अत: जनसाहित्य (लोकसाहित्य) का आदर्श विशिष्ट साहित्य से पृथक् होता है। किसी देश अथवा क्षेत्र का लोकसाहित्य वहाँ की आदिकाल से लेकर वर्तमान तक की उन सभी प्रवृत्तियों का प्रतीक होता है जो साधारण जनस्वभाव के अंतर्गत आती हैं। इस साहित्य में जनजीवन की सभी प्रकार की भावनाएँ बिना किसी कृत्रिमता के समाई रहती हैं। अत: यदि कहीं की समूची संस्कृति का अध्ययन करना हो तो वहाँ के लोकसाहित्य का विशेष अवलोकन करना पड़ेगा। लोक जीवन की जैसी सरलतम, नैसर्गिक अनुभूतिमयी अभिव्यंजना का चित्रण लोकगीतों व लोक-कथाओं में मिलता है, वैसा अन्यत्र सर्वथा दुर्लभ है। लोक-साहित्य में लोक-मानव का हृदय बोलता है। प्रकृति स्वयं गाती-गुनगुनाती है। लोक-साहित्य में निहित सौंदर्य का मूल्यांकन सर्वथा अनुभूतिजन्य है। लोकगीतों कि रचना के सम्बन्ध में लोगों का मत है कि इसकी रचना जनसमुदाय करता है लेकिन ऐसा तो हो ही नहीं सकता की गीतों की रचना के लिए जन समुदाय इकट्ठा हो और रचना करे | अनुभव की बात करे, मानव मन की बात करे तो सहज मानव प्रवित्ति है कि अत्यंत दुःख हो या सुख मानव मन की मनः स्थिती शब्दों में बयां हो जाती है | लोक गीत तो बाद में बने पहले तो वो मानव मन की सहज भावना रहीं होंगी और एक गीत का कोई एक ही रचनाकार हुआ होगा | कालांतर में इन्हें गाने वाले ज़रूर जन समुदाय के हुए | समुदाय रचना के सम्बन्ध में नृत्य गीत माने जा सकते हैं | आइये ऐसे ही

अहंकार शून्य, सहज, सरल और दुनिया के उत्कृष्ट विज्ञान की एक झलक हम भारतीय मूल की संस्कृति के ऋतू गीतों कजरी और हिंदुली में जांचते हैं | वर्ष में आने वाले विभिन्न ऋतुओं में जो गीत गाये जाते हैं उन्हें ऋतू गीत कहा जाता है | बघेलखंड में चार ऋतुओं के आधार पर कजरी, हिंदुली (निरवाही गीत), सुआ-रीना, चैता, होली गीत (फाग, कबीर), बारहमासा आदि गीत गाने की परम्परा है | **वर्षा ऋतू प्रेम, उल्लास, उछाह साथ ही करुणा की अभिव्यक्ति की ऋतू है** | बारिश की पहली बूँद प्यासी धरती के हिय में सुप्त अवस्था में पड़े प्रेम को और बढ़ा देती है, मिटटी की सोंधी महक मानो अपने प्रियतमा बादलो से बारिश रूपी प्रेम को सम्पूर्णता से उड़ेल देने की गुहार लगा रही हों कुछ इसी तरह की भावना बघेली कजरी गीतों में पायी जाती है | ये गीत संयोग श्रृंगार से लबालब भरे होते हैं ,इसमें डूब भी जाए तब भी प्यास नहीं बुझती | सावन के मनमोहक महीने में जो गीत गाये जाते हैं उन्हें कजरी कहते हैं | कजरी शब्द काजर से बना है | बघेली में काजल को काजर कहते हैं | कजरी का अभिप्राय यंहा काजल की तरह घिरे काले-काले बदलो से हैं | कजली का तात्पर्य कजली वन (केदली वन) से भी हो सकता है क्यों की बघेलखंड के सैकड़ो लोक गीतों में केदली वन शब्द सुनने को मिलता है | केदली वन का उल्लेख महाभारत में भी है | दरअसल बघेलखंड में कजरी गीत गायकी के साथ कजली उत्सव मनाने की भी समृद्ध परम्परा है जिसे खजुलइयाँ या **कजलियाँ** कहा जाता है | कजलियाँ उत्सव के सात दिन पहले जौ बोया जाता है और उत्सव के दिन इसे प्रवाहित करने पास के तालाब या नदी में ले जाया जाता है | इस उत्सव में नव विवाहिता अपने ससुराल से मायके आती हैं और इस उत्सव में प्रमुखता से भाग लेती हैं | जौ प्रवाहित करने के बाद सब लोग थोड़ा-थोड़ा जौ रख लेते हैं और भी अपने सगी संबंधियों को थोड़ा-थोड़ा देकर यह कर के गले मिलते हैं कि –" ऐसा दोस्त, भाई, पत्नी हर जनम में मिले | कजरी गीतों के विज्ञान की बात करे तो इन गीतों के गाने का तभी मज़ा है जब काली-कली घनघोर घटाएं पहाडो तक उतर आयें और झमझमाती हुई बारिश अपना तानपूरा छेड़ दे तब बारिश की बूंदों और बिजली के कड़क के बीच कजरी की गायकी अपने परवान पर होती है | मुझे याद है की जब मै गर्मी के दिनों में कजरी सुना देने की बात ग्राम्य कलाकारों से कहता था तब उन्हें कजरी याद ही नहीं आती थी वो कहती थीं कि " नहीं सुधि आबय लाला बिना समउ के गीत, अषाढ़ मा अया तब बताउब" यानी की बिना मौसम के गीत याद नहीं आते और यह सच है कि जैसे ही जिस गीत का मौसम आता है वो गीत एक-दो नहीं दर्जनों याद आ जाते हैं ऐसा मेरे साथ भी होता है | एक और बात की भादवं मास की काली अंधियारी रात जब अपना हाथ पसारो (फैलाओ) तो अपने को ही नहीं दिखता तो इन दिनों गाँव के लोग सर्प, बिच्छुओं के भय से रात्रि के 7 बजे तक बियारी (रात्रि का भोजन) कर लेते है | बियारी करके खाट पर तो बैठ गए पर समय काटे नहीं कटता ऐसे में शुरू होती है कजरी | इस अवस्था में गाई जाने वाली कजरियां बड़े-बड़े कथानको वाली होती हैं | बघेलखंड में ऐसे बड़े और करुण रस प्रधान कथानको वाली कजरियां दर्जनों की संख्या में आज भी मौखिक परम्परा में प्रवाहमान है जिनके श्रवण का हम सहज ही आनद ग्राम्य जीवन में पा सकते हैं | बघेलखंड में बरसात के मौसम में एक और वेदना पूर्ण गीत गाया जाता है जिसे **हिंदुली** कहते हैं | वर्ण विषय की दृष्टि से इन दोनों प्रकार के गीतों में कोई विशेष अंतर नहीं है , क्योंकि दोनों में संयोग श्रृंगार और वियोग श्रृंगार की प्रधानता पायी जाती है | कजरी संयोग श्रृंगार का उत्कृष्ट उदाहरण है तो हिंदुली वियोग श्रृंगार का | हिंदुली गायकी की परम्परागत विशेषता की बात की जाय तो यह निरवाही गीत की श्रेणी में आती है | यह ज्यादातर रोपनी, निरवाही करते

हुए गाई जाती हैं | हिंदुली गायकी का यह समय बड़ा रमणीय होता है | रिमझिम करती बारिश हो और खुले आसमान के नीचे सैंकड़ो की संख्या में निरवाह (निगाई करने वाला) निराई करते हुए सवाल-ज़वाब की शैली में हिंदुली गीत गा रहे हों | कभी-कभी तो एक खेत से पुरुष वर्ग गीत का एक पद गा रहा होता है और दूसरे खेत में निरवाही कर रही महिलाए गीत का दूसरा पद गाती हैं | गीत की मधुरता में शरीर कि थकान अपने दम तोड़ देती है और निरवाह की दिनचर्या में अंतर नहीं आने देती, प्रकृति के साथ-साथ चलने वाली उनकी समय सारणी उनके अंतिम सांस तक जाती है | इन गीतों में सरसता, मनोरमता और मधुरता का वो सामंजस्य देखने को मिलता है जो अन्य गीतों में नहीं | सावन के महीने में हरियाली आँगन से लेकर सूदूर ऊंचे-ऊंचे पर्वतो तक छाई है, पर्वत प्रदेश की रमणीयता सहज ही मन को बाँध लेती है | सावन महीना क्या है, अगर ठीक तरह जानना है तो आइये गाँव की ओर चलते हैं जंहा आज भी पीपल, आम, नीम, बरगद, महुये के पेड़ पर हिंडोले मिलेंगे जिन पर तरुणिया कजरी गाती हुई झूल रही हैं | तरुणियो के कोकिल कंठ से जब कजरी के बोल फूटते हैं तो सारा वातावरण कुछ ऐसी माधुर्यता में लीन है कि जिसकी तुलना नहीं, उदाहरण नहीं | कजरी वर्षा गीत का वर्ण विषय संयोग श्रृंगार है | इससे बेहतर प्रेम का उदाहरण अन्यत्र नहीं प्रियतम प्रेम की यह बानगी देखिये..

भइया मोर आये अनबइबा सबनबा मा न जाबय ननदी

सोने के लोटा गंगा जल पानी, चाहे भैया घूंटय चाहे जांय हो

सबनबा मा न जाबय ननदी...

सोने के थारी मा जेमना परोसेऊ चाहे भैया जेमय चाहे जांय हो

सबनबा मा न जाबय ननदी..

नवविवाहिता नायिका अपने प्रियतम के प्रेम में इस तरह लीन है की मायके से उसका भैया कजली के लिए बुलाने आया है लेकिन वो प्रियतम को छोड़ कर नहीं जाना चाहती और अपनी ननद से कहती है कि- ननद मेरे बीरन मुझे बुलाने आये हैं लेकिन मै मायके नहीं जाउंगी | सोने के लोटा में मैंने अपने प्रिय भाई के लिए गंगा का पवित्र जल रखा है , भैया की मर्जी की वो पानी पियें या न पियें लेकिन मै मायके नहीं जाउंगी | सोने के थाली में मैंने भैया के लिए जेमन परोस कर रखा है, उनकी मर्जी वो खाएं चाहे चले जाएँ लेकिन मै अपने प्रियतम को छोड़ कर नहीं जाउंगी | यंहा बहन के लिए उसका भाई भी प्रिय है पर सावन के महीने में वो प्रियतम से प्रीति छुडाकर किसी भी कीमत पर जाने को तैयार नहीं है |

ये पंक्तियाँ भी देखें...

हरी रामा बगिया माँ आयें मोरे श्याम देखन

देखन हम जाबय रे हारी

हरी रामा बगिया मा नवरंग झूला पड़े हां

हरी रामा झूलय सखिया सलेहर गामय कजरी रे हारी

नवविवाहिता ससुराल से सावन के महीने में अपने मायके आयी है और मां से कहती है कि मां बाग़ में श्री कृष्ण आये हुए है मै उन्हें देखने के लिए जाउंगी | मां बाग़ में तरह-तरह के झूले पड़े हुए हैं और मेरी सारी सखिया उन पर कजरी गाते हुए झूल रही हैं, मेरा मन नहीं मानता मैं भी झूलना चाहती हूँ | इस गीत में तरुणी कि अल्हड़ता और बेबकापन साफ़ नज़र आता है | वो पहले की ही तरह दौड़ते-भागते बाग़ में पहुँच जाना चाहती है लेकिन समाज एक विवाहिता को वही स्वछंदता कंहा देता है |

विरहणी का विरह इस हिंदुली में कैसे प्रकट हुआ है कि-

अइसन माया फंसाया हो कंधइया हिअय से राखा न

मोर दुखी के पिरितिया हिअय से राखा न

जइसय तलाये के पुरइन हलरय ओईसय हलरय न

मोर दुखी के पिरितिया हिअय से राखा न

जइसय करहिया के घिउना बरत हय ओईसय बरय न

मोर दुखी के पिरितिया हिअय से राखा न

विरहणी अपने प्रेमी से निवेदन करती है कि –"प्रिये, मैं तुम्हारे प्रेम में अपना घर-परिवार सब छोड़कर चली आयी थी, तुम्हे मुझको अपने हृदय से लगा के रखना चाहिए था क्योंकि आत्मीय जनों को त्यागकर मैं अकेली और बहुत दुखी हो गई हूँ पर तुमने मुझे अकेला छोड़ दिया | प्रिये जिस तरह तालाब में पुरइन (जलकुम्भ) बिना हवा के भी हिलती रहती हैं | हर वक़्त उसमे एक कम्पन मौजूद रहता है उसी तरह मेरे हृदय में हर क्षण तुम्हारे याद का दर्द कांपता है | प्रिये जिस तरह आग पर रखी हुई कड़ाही का घी जलता है उसी तरह हल पल मेरा हृदय भी तुम्हारी याद में जल रहा है |" इस गीत में जिस कोटि की उपमा का प्रयोग किया गया है वो हमे भारतीय लिखित साहित्य में नहीं मिलता | पुरइन के पत्ते की तरह बिना किसी हवा के भी मन के अन्दर बैठा बिरह का पत्ता कांपता रहता है | यह कितनी सहज और अनुभव पूर्ण उपमा है जो लोकगीतों में ही सुनी जा सकती है अन्यत्र नहीं |

सावन आते ही तरुणी को अपने मायके की याद आ रही है और वो अपने सास से कहती है कि-

तिजबा कजरिया के आबा रे महिनबा चले हो जाबय न

सासू अपने नइहरबा चले हो जाबय न

कइसे जाबू बउहर तू अपने नइहरबा नहीं हो आये न

तोंहर बीरन अनबइअबा नहीं हो आये न

आजु एकादसिया काल्हिन दुआदसिया परउ हो अइही न

मोर भइया अनबइअबा परउ हो अइही न

कइसे जाबू बउहर तू अपने नइहरबा बाढ़ी हो आयी न

गंगा जमुना के धरिया लीलि हो लेइही न

नवविवाहिता अपने सास से कहती है कि- सास रानी ! मेरे भाई मुझे लिबाने के लिए आ रहे हैं मै उनके साथ अपने नइहर को जाउंगी | सास कहती है कि- बहू ! तुम कैसे नइहर जाओगी तुम्हारे बीरन भाई तो तुम्हे बुलाने ही नहीं आये | सास रानी ! आज एकादशी है और कला दुआदशी परशो त्रयोदशी है तो परसों मेरे बीरन मुझे बुलाने आयेंगे | सास चाहती है की बहू मायके न जाए तब वो बहाना बनाती है कि- बहू गंगा और जमुना दोनों में बाढ़ आ गई है तो तुम पार न जा पाओगी | अब बहू को मायके की याद आ रही है माया की यादा रही है उसे नइहर जाना ही है तब वो सास से कहती है कि- सासू ! बांस कटा के नाव बनवा लूंगी और उस नाव पर बैठ कर मै और मेरे वीरान दोनों पार चले जायेंगे |

कजरी गीत में पति-पत्नी के प्रेम पूर्ण नोक-झोंक का अनोखा उदाहरण भी देखने को मिलता है एक कजरी गीत की कुछ ये पंक्तियाँ...

रनिया खोला न केबडिया हम बिदेसबा जाबन न

जो तू पिया बिदेसबा जाबा हमरे बाबुल का हो बोलाय दिहा

हम नइहरबा जाबय न ..

जो तू रनिया बबुल घर जाबू जेतना लागा हय हो रूपइया

ओतना दइके जइहौ न ....

जो तू पिया रूपइया मंगबा जइसय बाबुल के रहा न्हा

ओईसय हमका पठबा न

सावन का मनभावन महीना आ गया है, काफी रात हो चुकी है, नायिका घर में अकेली नायक के आने का इंतज़ार कर रही है | और फक्कड स्वाभाव का नायक इधर अपने साथियो के साथ गप्पे हांक रहा है | देर रात गए जब वो घर का दरवाजा खटखटाता है तो नायिका दरवाजा खोले से इनकार कर देती है और तब रुष्ट नायक अपनी नायिका से कहता है कि –“ हे प्रिये अगर तुम दरवाजा नहीं खोलोगी तो तुम्हारी कसम मै तुमसे दूर बिदेश चला जाउंगा | नायिका कहती है कि ठीक है आपको बिदेश जाना है तो जाइए पर उससे पहले मेरे पिता जी को बुला दीजियेगा मै अपने मायके चली जाउंगी | प्रिये ! यदि तुम मायके जाना चाहती हो

तो जितना रुपया तुम्हारे विवाह में खर्च हुआ है वो सब वापस कर दो | प्रियतम अगर आप मुझसे रुपया मांग रहे है तो मेरी भी एक बात सुन लीजिये जिस तरह मैं अपने पिता के घर से वारी-कुंआरी आयी थी उसी तरह भेजो | अहा ! कितना कडवा सच है इस पंक्ति में कि एक औरत पुरुष के लिए अपना तन-मन सब कुछ अर्पण कर देती है और पुरुष फिर भी पूछता है कि क्या किया है तुमने मेरे लिए ? इस कजरी गीत में पति-पत्नी के प्रेम पूर्ण हास-परिहास, रूठने-मनाने का सुन्दर चित्रण देखने को मिलता है यह गीत 20 पद का है | गीत के अंत में नायक को नायिका की यह बात मान लेनी होती है की अब मैं तुम्हे घर में अकेला छोड़ कर कंही नहीं जाउंगा |

सइयाँ झुकि आयीं कारी हो बदरिया कइसे नोकरिया जाबा न

धनि ! गोड मा जूता हाथे मा छतबा मुख धय लेब रुमलिया न

धनि ! तरी बहय निरिया ऊपर उडय धुँअना बीचे चलय जहजिया न

राजा निरमोही बने हां बिदेसिया रेन पियासी कइसे कटिही न

सावन का मनभावन महीना आ गया है नायिका अपने पति से कहती है की प्रिय कारे-करे बादलो ने धरती को चारो तरफ से ढँक लिया है जल्दी ही घनघोर बारिश होने वाली है, ऐसे में आप नौकरी के लिए कैसे जायेंगे | तब नायक कहता है कि- पैर में जूता पहन लूंगा , हाथ में बारिश से बचने के लिए छाता ले लूंगा और मुख पर रुमाल रख कर चला जाउंगा | प्रिये ! जंहा मैं जा रहा हूँ तंहा नीचे-नीचे पानी बहता है , ऊपर धुंआ निकलता और बीच में जहाज चलती है उसी पर सवार होकर मैं नौकरी के लिए चला जाउंगा | नायिका तो किसी कारण नायक को सावन के मन भावन महीने में अपने से दूर नहीं करना चाहती इसलिए वो तरह-तरह की समस्याएं सुनाती है | लेकिन गरीब पति पत्नी के विनय को ठुकराकर रोज़गार की तलाश में दूर देश को चला जाता है |

ए बानगी भी देखिये जंहा बेटी अपने पिता से फूल रोपने के बारे में सलाह लेती है-

कहमा लागाई बाबू बेला हो चमेलिया पय कहमा लगाई लाल गेंदबउ हो न
दुअरा लगाबा धेरिया बेला हो चमेलिया पय अंगना लगाबा लाल गेंदबउ हो न

काहे से सींची बाबू बेला हो चमेलिया पय पय काहे से सींची लाल गेंदबउ हो न

गंगा जल सींचा बेटी बेला हो चमेलिया पय दुधबा से सींचा लाल गेंदबउ हो न

कजरी, हिंदुली बघेलखंड की उतम भावनाओं और सामाजिक चित्रों से युक्त है , नारियों की भावनाए इन गीतों में मुखर हो उठती हैं | कजरी, हिंदुली के कुल 150 संकलन मैंने किये जिसमे संयोग श्रृंगार और

वियोग श्रृंगार के साथ-साथ नव विवाहिता के नइहर जाने की पीड़ा, भाई प्रेम, पावस ऋतू की सुंदरता, इतिहास के उत्थान-पतन एवं घटनाओं के चित्र, अबोध बालाओं के अपहरण की कथाएं, राजा के क्रूरतम अत्याचार आदि के कथानक मिले हैं , और इस तरह इतिहास, दर्शन, भावनाअभिव्यक्ति एवं सामाजिक-सांस्कृतिक स्वारूपो के अध्ययन की दृष्टिकोण से इन गीतों की व्यापक महत्ता है | कजरी, हिंदुली और बारहमासा को मिलाकर अब तक मुझे 7 अलग-अलग धुनें प्राप्त हुई है जिनमे सैकड़ो गीतो की रचना की गई है | आज बदलते परिवेश ने इन गीतों को इनकी वास्तविक और वैज्ञानिक आधारशिला से उखाड़ फेंक दिया है | ये गीत जिस माधुर्य की पहचान थे वो जाती रही है | जिस ग्राम्य संस्कृति में हमे इन गीतों के सुरक्षित होने का गुमान है, अब वंहा भी दिन बा दिन एक अजीब सी खामोशी पसर रही है |

कोहरौंहीं गाथा गायको के गाँव –:

कोहरौंही गाथा परम्परा बघेलखंड के आलावा देश के अन्य राज्यों में भी पाई जाती है | जिसे उत्तरप्रदेश में कोंहरउल के नाम से भी जानते हैं | विलुप्त प्रायः होती गाथा गायन परम्परा को हम ग्राम,प्रदेश ,राज्य ,देश ,माहादेश आदि के आधार पर उसके आस्तित्व को निम्नलिखित रूप से पहचान दे रहे हैं –

ग्राम अमरपुर -: कोहरौंही गाथा गायन के लिए सीधी ,बघेलखंड ही नहीं सम्पूर्ण मध्य प्रदेश में जाना जाने वाला यह ग्राम जिसे कला रूपों से सम्बन्ध रखने वाले तमाम लोग जानते होंगे |यह गाथा गायन परम्परा आज भी इस ग्राम में बड़ी सक्रिय रूप से प्रचलन में है | सीधी से ३० किलोमीटर की दूरी पर अमरपुर सिहावल रोड पर स्थित यह ग्राम करीब २००० की आबादी वाला है |यंहा कुम्हार जाति के अलावा कोल ,कमर ,जोगी ,चमार ,आदि जाति निवास करती है जिसमे से कुम्हार समुदाय की कुल जनसंख्या 157 है |इस समुदाय की जातिगत कला रूप के २ कलाकारों को छोड़ दे तो पूरे समुदाय से यह गायन परम्परा पूर्ण रूपेण खत्म हो चुकी है विलुप्ता की कगार पर यह गायन परम्परा आज भी इसी ग्राम के दो कलाकारों के नाम से पूरे रास्ट्रीय स्तर पर जानी जाती है |संभु कुम्हार और रिपुसूदन कुम्हार ये दोनों सगे भाई हैं और दोनों भाई बड़े गवैया | गाँव में परिवार में शादी व्याह के अवसर पर या पूजा पाठ के अवसर पर दोनों भाई कोहरौंही की शानदार प्रस्तुति देते हैं | बाद के लोगों ने भी इनसे इस गाथा गायन की शिक्षा प्राप्त की तो कुल मिलाकर देखा जाय तो अब गिनती के कोरस सहित १४ कलाकार हैं | बघेली लोक कला रूपों का शोध कार्य करते इस जाति की जातीय गाथा गायन कला रूप मेरे हाथ लगी और तब से इस गाथा की प्रस्तुति के लिए मन बाध्य रहा और अब धीरे धीरे आज पूरे जिले में इस गाथा को लोग जानने-समझने लगे हैं साथ ही सम्मान की दृष्टि से भी देखने लगे और इसकी मंचीय प्रस्तुतियां भी होने लगी है | इतना ही नहीं अब इस कलारूप के तीन नए कलाकार जिनकी उम्र लगभग ११ के आस-पास है तैयार हो रहे हैं वो भी परम्परागत रूप से गाथा गायन की शिक्षा प्राप्त कर रहे हैं | मुझे आशा है की आने वाले दिनों में ये अपने इस गाथा गायन परम्परा के लोक प्रसिद्ध और रास्ट्रीय स्तर पर भी ख्यातिलब्ध कलाकर हैं |ऊबड़-खाबड़ भूमि पर बसे इस ग्राम की कुल आबादी कृषि से ही अपना जीवन यापन करती है और कोई दूसरा माध्यम नहीं है, साधन नहीं है | कुम्हार जाति भी अब अपनी पारम्परिक कला रूप को छोड़ मेहनत मजदूरी कर अपना और अपने परिवार का भरण-पोषण कर रही हैं | दैनिक जीवन में उपयोग आने वाले मिट्टी के बर्तनों का निर्माण कर व् उन्हें गाँव- मोहल्लो एवं शहर तक बेंच कर अपना जीवन यापन कर रहे हैं |

ग्राम बंदइला -: बघेलखंड में अमरपुर के अलावा अन्य कुम्हार जाति की बहुतायत निवास वाले ग्राम भी हैं जंहा से कुम्हार जाति के लोग दूर-दराज के गाँवों व सीमावर्ती राज्यों में कुम्हार गाथा गायन के लोग उत्सवो,अवसरों पर अपनी मंचीय प्रस्तुति देने जाते रहे हैं| वैसे ये ग्राम लोक में जाने जाते हैं लेकिन ज्यादा मंचीय कार्यक्रम न हो पाने के कारण इनका राज्यीय स्तर पर कोई छवि नहीं बन पायी है |लेकिन इस ग्राम मे आज भी इस कलारूप के अच्छे जानकार व कलाकार निवासरत हैं जो अपनी परम्परा को ओढ़ते-बिछाते हैं |यह ग्राम सीधी से 67 किलोमीटर की दूरी पर सीधी बहरी रोड पर बसा है जिसकी कुल मानक आबादी २७०० हैं और कुम्हार जाती समूह के लोग करीब 300 के आस-पास हैं |जिसमे से कुल २० लोग ही इस गायन परम्परा के संवाहक रूप में कार्य कर रहे हैं |भौगोलिक दृष्टी से यंहा की ज़्यादातर ज़मीन पथरीली और ऊबड़-खाबड़ है जो की अच्छी उपज की नहीं है |इस क्षेत्र का प्रमुख व्यवसाय ,जीवन यापन का साधन कृषि कार्य ही है| कुम्हारों के जीवन यापन की बात करे तो मिटटी के बर्तन व गाँव के ज़मीदारो की ज़मीन पर हल चलाना, मजदूरी करना है| आज से दो वर्ष पूर्व इस ग्राम में गायन की परम्परा अंशीय रूप में रही है लेकिन अब धीरे धीरे लुप्त होती जा रही है| पूछने पर पता चला की व्यस्तम जीवन और बेरोजगारी के चलते इनके युवा परदेश की तरफ नौकरी के चक्कर में जा रहे हैं जिसके कारण परम्परा के संवाहको की कमी हो रही है| कुछ लोगो का मानना है की आधुनिक समाज में किसी के यंहा जाना बैठना अब ठीक नहीं रह गया तो किसी का मानना है की पहले सब के यंहा आने-जाने, उठने-बैठने की परम्परा रही है| समाज ने ऐसे नियम बनाये थे उत्सव बनाये थे की सब के यंहा जाना-आना, मेल-मिलाप होता था, अब वो सब व्यस्ततम जीवन पद्धति के कारण नष्ट हो गया इस कारण कलारूप भी विलुप्त हो रहे हैं |जब उनसे यह पूछा गया की कंही आपकी कला का व्यवसायिक न बन पाना कारण तो नहीं है ? तो उन्होंने कहा की- व्यवसाय तो यह कभी न थी हम अपने आनंद के लिए गाते बजाते रहे हैं कला का प्रदर्शन करते रहे हैं अपने सम्मान के लिए मंचो पर और लोगों के बुलावे पर जाते थे और रूचि के साथ पूरी रात- रात तक इसका गायन होता था लेकिन अब वो समाज न रहा इस कारण हम भी चुपचाप बैठ गए |अपने एजति के सम्बन्ध में यंहा के कुम्हार यह भी कहते हैं की हम कुम्भज ऋषि के वंसज और राजा दक्ष के यंहा यज्ञ में कार्य करने वाले प्रजापतियों की संतान हैं| लेकिन बघेलखंड में इन्हें हरिजन की श्रेणी में रखा गया है|

ग्राम सरसा -: यह ग्राम बहरी मायापुर रोड पर स्थित है | यह सीधी मुख्यालय से ६५ किलोमीटर की दूरी पर समतल भूमि पर बसा हुआ है | इस गाँव की कुल अबादी ३८०० की है | यंहा कुम्हार के आलावा ब्रम्हन,चमार, तेली, कोल व यादवो की बड़ी –बड़ी बस्तियां हैं| इस गाँव के कुम्हार जाति के लोग लगभग दो पीढियों से गाथा गायकी की परम्परा को छोड़ चुके हैं| यंहा निवासरत कुम्हार जाति के जीवन यापन का मुख्य साधन मिटटी के बर्तन बनाना और ज़मीदारो के यहाँ अधिया की खेती करना है|

ग्राम कुकुरांव -: यह ग्राम सीधी से बहरी मायापुर रोड पर स्थित हैं व सीधी मुख्यालय से करीब ७० किलोमीटर कि दूर है| इस ग्राम की कुल मानक आबादी २३०० हैं जंहा कुम्हारों के मात्र ६ घरो के कुल ३१ लोग निवास करते हैं| कुम्हारों के आलावा कोल,चमार, बैगा,तेली व ब्रम्हण जाति निवास करती है| यह गाँव पूरी तरह अपनी परम्परा को भूल चुका है और मिट्टी के बर्तन व खेती कर अपना जीवन यापन करते हैं | एक दो घरो के सदस्य सरकारी नौकरी पर हैं तथा कुछ प्राइवेट कंपनियों में कार्य करते हैं|

ग्राम सलइही -: इस ग्राम में कुम्हारों की कुल संख्या 20 है ये कोंहरौंही गाथा का गायन नहीं करते बल्कि सजनई व बिरहा गायन की परम्परा से जुड़े हैं|

ग्राम झरी -: यह मायापुर रोड पर ही स्थित ग्राम है यंहा कुम्हार तो हैं लेकिन गाथा गायन परम्परा को प्रस्तुत करने वाले कलाकार नहीं हैं| यंहा की कुल आबादी २३०० है, जिसमे से कुम्हारों की कुल संख्या ५३ है|

ग्राम रामडीह -: इस ग्राम में कुम्हारों की आबादी बहुत ही कम यानी की दो घर के कुल 13 लोग हैं जिसमे से 4 बाहर प्राइवेट कम्पनी में कार्यरत हैं बाकी दो बूढ़े गाँव में मिट्टी के बर्तन बनाने और बची संख्या की महिलायें और बच्चे हैं| गाथा गायकी के कलाकार यंहा नहीं हैं|

ग्राम मेंढउली-: सीधी से ७५ किलोमीटर की दूरी पर बघोर रोड पर स्थित सिहावल तहसील में स्थित ग्राम मेंढउली की कुल मानक आबादी २७०० है, एवं यंहा निवासरत कुम्हार जाति की कुल संख्या ३२९ है जिसमे की कोहरौंही गाथा गायन परम्परा को प्रस्तुत करने वालो कलाकारों की कुल संख्या ११ है| यह ग्राम कोहरौंही गाथा गायन परम्परा के लिए राज्यीय स्तर पर नहीं जाना जाता और न ही यंहा के कलाकारों को अब तक मंच प्रदान हुआ है|मेंढउली ग्राम में कोहरौंही गाथा गायन को प्रस्तुत करने वाले बड़े ही बुजुर्ग कलाकार हैं जो की इसके इतिहास के सम्बन्ध में काफी कुछ जानते हैं जिनके कारण हमें नयी दृष्टी मिल सकी |और हम इस परम्परा के और लोगो को तलाशने में कामयाब रहे |सिहावल तहसील है इस लिए यह ग्राम शहर से जुड़ा होने के कारण त्वरित गति से अपनी सांस्कृतिक परम्परा और सामाजिक ढाँचे को खोता जा रहा है जो की इस परम्परा की देन रही है |अगामी कुछ ही सालो में यह कलारूप विलुप्त हो जाएगा|

बघेलखण्ड की प्रतिनिधि गाथा गायन परंपराओ में से एक है कोहरौंही गायन यह एक जाति विशेष "कुम्हार द्वारा गायी जाती हैं जो बघेलखण्ड के कुल २३ ग्रामो में निवासरत है| कोहरौंही का सीधा अर्थ कुम्भज ऋषि से है| इनकी उत्पति के संबंध मे लोक मिथ्य है की ये राजा दक्ष के काल के हैं| इन्होने राजा दक्ष के यज्ञ में बड़ी भूमिका निभाई थी इन्हें तभी से प्रजापति भी कहा जाता है| कोहरौंही परम्परा की गायकी भारत के उत्तरप्रदेश को छोड़कर किसी अन्य राज्य में नहीं पाई जाती|

ग्राम कोरसर -: सीधी से ७७ किलोमीटर की दूरी पर सीधी सिंगरौली रोड पर स्थित यह ग्राम सिंगरौली जिला में आता है| सिंगरौली एशिया महाद्वीप की सबसे बड़ी कोल माइंस के नाम से जानी जाती है| चितरंगी ब्लाक में स्थित ग्राम कोरसर की कुल मानक आबादी ३३०० है,जिसमें से ३७ घर कुम्हारों के हैं ,जिनकी कुल संख्या ३२५ के आस –पास है| गाँव में कोहरौंही गायक कलाकारों की संख्या 3 है| इस गाँव में नयी पीढी का कोई कलाकार नहीं है ऐसा नहीं है की वो परम्परा के बारे में नही जानते या उन्हें मुहजवानी कुछ गीत याद नहीं हैं लेकिन उसे सुनाना या उसे मंचीय रूप में प्रस्तुत करना वो अपने सम्मान के खिलाफ मानते हैं| सिंगरौली जिले में तमाम कंपनियों के आ जाने से छोटे बड़े लगभग ५० प्रतिशत ग्रामीण जन मजदूरी करने के लिए जाते हैं| उन्हें इस तरह के सांस्कृतिक प्रदर्शन से कोई मतलब नहीं

कोई रूचि नहीं | बाहर की अत्याधुनिक सामाज की सांस्कृतिक प्रस्तुतियां जिसे हम आकेस्ट्रा कहतेहैं उसका अवलोकन करने भारी संख्या में ज़रूर जायेंगे | इस तरह के संस्कृति विनाशक आयोजन उनके ग्राम में भी आयोजित होते रहते हैं |

ग्राम बरहट -: सीधी से ७९किलोमीटर की दूरी पर सीधी सिंगरौली रोड पर स्थित यह ग्राम सिंगरौली जिला में आता है | चितरंगी ब्लाक में स्थित ग्राम बरहट की कुल मानक आबादी २६०० है,जिसमें से २१ घर कुम्हारों के हैं ,जिनकी कुल संख्या २१४ के आस –पास है | गाँव में कोहरौंही गायक कलाकारों की संख्या 9 है | इस गाँव में भी नयी पीढी का कोई कलाकार नहीं है | यह ग्राम भी कंपनी और आधुनीकीकरण से प्रभावित है |

ग्राम मझिगामा -: कुम्हारों की बहुतायत संख्या वाला यह ग्राम रीवा जिले के हनुमना तहसील में आता है | सीधी मुख्यालय से इसकी दूरी ४5 किलोमीटर व रीवा मुख्यालय से इसकी दूरी ४7 किलोमीटर के आस-पास रास्ट्रीय राजमार्ग ७ पर स्थित है | इस ग्राम की कुल मानक आबादी २७०० के आस-पास है जिसमे से कुम्हारों की लगभग कुल संख्या ३४५ है | कुल संख्या में से गाथा गायन कलाकारों की संख्या १४ है | ये कलाकार आज भी शादी-व्याह ,पूजा-हवन व अन्य उत्सवो पर अपनी जातीय कालाविधि का प्रदर्शन करते हैं | यह क्षेत्र वर्तमान में उत्तरप्रदेश के लगा हुआ है इस कारण यंहा की बोली उत्तरप्रदेश की बोली से मिलती-जुलती है व उत्तरप्रदेश की कला संस्कृति का भी यंहा प्रभाव देखने को मिलता है | जैसे की यंहा के कलाकार अपनी जातीय कला संस्कृति के प्रदर्शन के साथ-साथ भोजपुरी बिरहा व अन्य गायन विधाओं का गायन-वादन भी करते हैं |याभा के कोहरौंही गाथा गायन कलाकार कोहरौंही में उत्तरप्रदेश में गाई जाने वाली गाथाओं का गायन करते हैं साथ संस्कार गीतों ,ऋतू गीतों,व कोहरौंही में बारहमासी गीतों की गायकी भी सुनने को मिलती है |

ग्राम खटकरी-: बघेलखंड के रीवा जिले के हनुमाना तहसील में स्थित ग्राम खटकरी की सीधी मुख्यालय से कुल मानक दूरी ९१ किलोमीटर है और वंही रीवा मुख्यालय से भी इसकी दूरी लगभग इतनी ही है |क्योंकि यह तहसील रीवा रियासत के बिलकुल अंतिम पूर्व छोर पर स्थित है इसके थोड़ी दूर बाद ही उत्तरप्रदेश राज्य आ जाता है दूसरे शब्दों में कहें तो हनुमाना तहसील में मध्यप्रदेश के बघेली बोली संस्कृति और उत्तरप्रदेश की मिर्जापुरी बोली का मिला-जुला रूप सुनने को मिलता है | रीवा जो आज का जिला है कभी रीवा रियासत के नाम से जाना जाता रहा है | बघेल राजाओं की यह राजधानी हुआ करती थी जिसके अंतर्गत वर्तमान के ६ जिले आते हैं | यदि पूर्व के रियासती क्षेत्रफल की बात करे तो नागौद से लेकर मिर्जापुर चोपन बिहार से लेकर सोनभद्र चित्रकूट उत्तरप्रदेश तक और इधर छत्तीसगढ़ के बिलासपुर तक का भाग बघेलो की जागीर हुआ करती थी | बिलासपुर जो छत्तीसगढ़ का आज प्रमुख जिला माना जाता है कभी बघेल राजा बिलासा के नाम पर इसका नाम बिलासपुर रखा गया था जिसकी नींव पूर्व में एक ग्राम के रूप में रखी गयी थी | तो ग्राम खटकरी की कुल आबादी २९०० के आस-पास है जिसमे से कुम्हार जाति की कुल जनसंख्या २३० है | जिसमे उम्र के तीनो पड़ाव के लोग शामिल हैं | कोहरौंही गाथा गायन कलाकारों की कुल जनसंख्या १७ है लेकिन ये गाथा गायन का प्रदर्शन मंचीय रूप में नहीं करते | पूर्व के

दिनों में ये अपनी परम्परागत रूप से उत्सवो, त्योहारों व अन्य अनुष्ठानिक अवसरों पर इसका गायन अपने समाज, गाँव के लोगों के बीच बैठकर कर लिया करते थे | लेकिन पिछले एक दशक से यह प्रथा भी निर्वाह में न रह सकी | इनका मानना है की कंही न कंही हमारे पास समय का अभाव है और दूसरा यदि समय है भी तो लोगो की मानसिकता अब उस तरह नहीं रह गयी साथ बैठकर गायें- बजाएं | लोग बेहतर समझते हैं की घर बैठकर टी.व्ही देख लिया जाय | आज जब मै इस गाँव में पहुंचा कलाकारों से बात की तो यह बाते सामने आयीं | उन्होंने हमारे लिए अपनी कला का प्रदर्शन किया व हमसे बात की पर उनका मानना है की अब हमारी परम्परा ज़्यादा दिनों तक नहीं बच सकती क्योंकि आगे की पीढी के लोग इसे सीख नहीं रहे उन्हें शर्म आती है यदि सरकार कुछ इसके संरक्षण की दिशा में सार्थक व वास्तविक कदम उठाये तो हम पुनः जी उठेंगे | उनका कहना था की उन्हें आनंद मिलता है जब हज़ार लोगों के समक्ष अपनी कला का प्रदर्शन करते हैं और श्रोता उन्हें सम्मान देते हैं तो पर कोई हो जो इस कला को व्यवसाय से जोड़े, हमे पता है की इसका प्रदर्शन हमारे समाज की परम्परा का संरक्षण है ,समाज में आनंद और भाईचारे को बढाता है ,आमजनों को सुख प्रदान करता है और सबसे बड़ा तो खुद को शान्ति मिलती है पर रोजी-रोटी के चक्कर में हम अब इसे कान्हा सुचारू रख पा रहे हैं

ग्राम केरहा -: यह ग्राम भी रीवा जिले के हनुमना तहसील में आता है | इस गाँव की कुल आबादी २८०० के आस-पास है | जिसमे से कुम्हारों के कुल १८ घर हैं लेकिन कोहरौंही गाथा गायन की प्रस्तुति करने वालो की कुल संख्या मात्र ७ है | मै इनसे भी मिला जिनसे बातचीत के दौरान यही समस्याएं सामने आयीं | लेकिन इस गाँव के कलाकार आज भी ओनी गायकी का प्रदर्शन मौको-अवसरों पर करते हैं ऐसा उन्होंने बताया | लेकिन साज सामान के अभाव के कारण हमारे लिए वो प्रदर्शन न कर पाए | परन्तु उनकी कला के संबंध में काफी बातचीत हुई जिसका मै एक अंश प्रस्तुत कर रहा हूँ | उन्होंने हमें अपनी कुम्हार जाति की उत्पत्ति के सम्बन्ध में बताया उनका एतिहासिक और सामाजिक विवरण दिया साथ ही वो मिट्टी से क्या-क्या वस्तुएं बनाते हैं जो की दैनिक जीवन में उपयोग होती हैं इसकी भी जानकारी वस्तुओं के नाम और उनकी उपयोगिता सहित बताई | मिट्टी के बर्तन की गुणवत्ता के बारे में बातया साथ ही कुम्हार और कंहार जाति के संबंध में भी बताया जिसकी जानकारी मै निम्नवत दे रहा हूँ |

कुम्हारों के अन्य ग्राम-: कुकुरीझर, मडबा, जोरउंधा, महराजपुर, जनकपुर, सारो, पोखरा, बतौली, खैरही, उपनी, जमुनिहा, जमोड़ी, पनमार, कुबरी , बम्हनी, सेमरिया, पोंडी, सिलबा-डांड, लकोड़ा, बरिगवां, सेमी, कोचिटा, छुहिया, कथरिया, हडबड़ो, सजहबा, नेबूहा, कठौली, कारीमाटी, मडरिया, रामपुर, पटेहरा, पटेहटा, तेंदुआ, रोजउंधा, अइठी, बारी, बंजारी, सुकबारी, बघबारी, गाडा-खोह, भदरहिया, भागोहा, भेलकी, तिलबारी, भेलकी, डोल, भमरहा, कोठार, बिछिया, पनमार, पडखुरी, बोकरो, बेलदह, भोल्गढ़, सुकबारी,पडैनिया, भदौरा, छुही-पोंडी, ताला, खरहटा, पडरी, सतनरा, बहेरा, करहिया, मलिखम, कुचवाही, हत्था-बघवार, बढौरा, हडबड़ो, कोठार, कुडिया पडखुरी, मडवा, करनपुर,कठार, सेमरिया, सेमरिया-पोंडी, धनहा, मधुगांव, सुलवार, सरदा-पटेहरा, सोनतीर-पटेहरा, बघऊ, मवई, छाबारी, चुआही, बंजारी-चुआही, करमाई, सलइंहा, जोबा, बारी, बभनी, छिउलहा, कमचढ़,कोचिटा, भरुही, ढाबा, कोठदर, तरिहा, घोघरा, हटबा, परसवार, डढ़िया, मयापुरा, पतुलखी, रामडीह, बरमबाबा , पोडरिया, करदा, टेट- पथरा, अमल्पुर,

कोचिला, बहेराडाबर, देवादांड,कठौली, बैरिहा, बंदरिहा, हिनौती, अमिरती, सुपेला, देवगांव, नकझर, अमरहबा, कुसेंडी, बारी-पान, बढ़ौना, तिमसी, परसिदी, चमरौंही, तितली, दुधमनिया, गेरुआ, बहया, चित्बरिया, केशौली, भनमारी, मुरमानी, सिहौलिया, गडबा, चिलमा, जेठुला, बकबा, सिलबार, कोटा, भैंसा डोल, मेढकी, कुदरिया, खमचौरा, डीम, डिहुली, लहिया, धुम्मा, कुस्परी, पावा, दुअरा, सांडा, सुपेला, चितबरी, बघऊं आदि |

कुछ प्रसिद्ध कोहरौहीं कलाकारों का परिचय -:

१. शंभू नाथ कुम्हार – कोहरौंही गाथा गायन परम्परा के लोक प्रसिद्ध कलाकार जो की अब रास्ट्रीय स्तर पर ख्याति प्राप्त कलाकार भी हैं | इन्होने कोहरौंही गायन परम्परा के लिए अब तक कई रास्ट्रीय ,राज्यीय स्तर के आयोजनों में अपनी सराहनीय प्रस्तुतियां दी हैं और विलुप्त होती इस गायन शैली को पुनर्जीवन दिया है | कोहरौंही जी ने प्रस्तुतियों के आलावा ऐसे ग्रामो में निवास कर रहे कुम्हार जाति के कलाकार जो की अपनी परम्परा को पूर्णरूपेन भूल चुके थे उनमे पुनः एक नया जोश भर दिया है और वो अब प्रस्तुतियों के लिए व्यस्तम जीवन से समय निकाल अपनी परपरा के प्रति सजग हो गए हैं | शंभू नाथ जी ने परम्परा से जुड़े उन तमाम लोगो तक पहुचाया जिनसे की हमे कुम्हार जाति के तमाम निवास स्थानों का पता चल सका |

२. रिपुसूदन कुम्हार - यह आज भी अपनी परम्परा को बनाये हैं जबकि उन्ही का मानना है की समाज बदल चूका है अब वो पहले वाला समाज नहीं रहा जिससे की इस जाति का जीवन यापन होता था | लेकिन रिपुसूदन जी आज भी मिट्टी के बर्तन बनाकर अपनी जीविका चालाते हैं |

३. राम सहोदर - यह अपनी परम्परा के अच्छे जानकार और गायक हैं | ये भी मिट्टी के बर्तन गढ़ने का कार्य करते हैं | कोहरौंही गाथा गायन की प्रस्तुती अक्सर ठण्ड के महीनो में हुआ करती थी या शादी विवाह अन्य अनुष्ठानो के अवसर पर जब घर में रिश्तेदारों की संख्या बढ़ जाती थी तो बिस्तर कम पड़ते तो रतजगा होता गायकी का | लोग गाते और रात रात भर यह प्रदर्शन चलता रहता | इन्हें असंतोष है तो इस बात का कि अब वो लोग नहीं रहे ,वो समाज नहीं रहा ,जो हमारी गायन परम्परा को सुनता था सम्मान करता था,और शायद यह असंतोष ठीक भी है समाज की बात ही छोडिये जो सरकार लोक कलारूपो को बचाने में करोणों रुपये खर्च कर रही है वो भी अभी तक सही मायने में इन तक पहुँच नहीं पायी |यदि पहुँची भी तो शायद शक्रिय तब होगी जब सब विलुप्त हो जाएगा | यह असंतोष आज इस समाज की परम्परा को इस छवि को धूमिल कर रहा है |

४. रामलाल कुम्हार - यह इस गायन परम्परा के नवोदित गायक कलाकार हैं |

५. राम दरस कुम्हार - यह अब वैसे गायकी का कार्य छोड़ चुके हैं या दूसरो शब्दों में कहें तो ये भूल चुके हैं की इनकी यह परम्परा रही है कभी लेकिन इन्हें अब भी सारी गाथा गायन कथाये कंठस्त है |

६. दुलारे कुम्हार - यह भी इस गाथा गायन परम्परा के नवोदित कलाकार हैं |

७. श्याम सुन्दर - वैसे कोहरौंही गाथा गायन परम्परा समुदाय ने आने वाली नयी पीढी को सिखाना ही बंद कर दिया , या कहे की नयी पढ़ी ने सीखना ही छोड़ दिया | लेकिन इन्होने आज भी उस परम्परा को

बचाकर रखा | वो अपनी परम्परा से प्रेम करते हैं या बेरोजगारी की मजबूरी ने उनके बच्चो को भी परदेश या कंपनियों में जाने पर मजबूर कर दिया है | कारण कोई भी हो लेकिन इनकी सहमती के कारण ही इनके बच्चे इस कलारूप को सीख सके हैं और इस परम्परा की गायकी करते हैं |

८. धीरेन्द्र कुम्हार - ये भी इस परम्परा के नवोदित कलाकार हैं | नवोदित ही नहीं बल्कि यह ११ साल का लड़का है जो धीरे-धीरे अपनी परम्परा को परम्परा पुरुषो के बीच रहकर सीख रहा है |

कोहरौहीं गाथा के सम्बंधित क्षेत्र का परिचय -:

बघेलखंड अंचल अपनी लोक संस्कृति के लिए प्रदेश में ही नहीं बल्कि देश में अपनी एक विशिष्ट पहचान और प्रतिष्ठा रखता है | विन्ध्य और रेवांचल के नाम से प्रसिद्ध यंहा की धरती की लोक संस्कृति परिवेश के लिए ख्यात है | और अब सीधी रंगमंच परिवार के सहयोग और अथक प्रयासों से बघेलखंड की लोक कलाएं आज पूरे भारत वर्ष के सांस्कृतिक मंचो पर प्रस्तुत हो रही हैं, प्रसारित हो रही हैं |तेरह हज़ार वर्ग मील में फैले बघेलखंड के भूखंड में यंहा के लोगो की एक विशिष्ट जीवन शैली है | इस क्षेत्र की अपनी बोली है | बघेलखंड के इतिहास का पल्लवन वैदिक सभ्यता और संस्कृति से हुआ है | भृगु पुत्र शुक्र दत्य याजक था | शुक्र की पुत्री देवयानी ययाति को व्याही थीं | देवयानी से यदु और तुर्वशु दो पुत्र पैदा हुए | जीवन के अंतिम पड़ाव में ययाति ने अपना राज्य पुत्रो के बीच बांटकर भृगु श्रिंग पर तपस्या करने चले गए | महाराज ययाति चौदह द्वीपों के स्वामी थे | उन्होंने अपना राज्य इस प्रकार अपने पुत्रो में बाँट दिया दक्षिण पूर्व के राज्य का भाग तुर्वशु को दिया | यंहा आज कल रीवा रियासत है | बघेलखंड और रीवा रियासत परस्पर पर्यायवाची से हैं |शिव संहिता में इस भूखंड का उल्लेख वरुणाचल नाम से है | इसे शेषावतार लक्ष्मण की राजधानी माना गया है | इस अंचल में लक्ष्मण की उपासना लोकप्रिय है | सीधी-शहडोल के गोंड आदिवासियों में लक्षिमन जती का कथानक बहुप्रचलित है | वनवास काल में इस अंचल में राम, लक्ष्मण और सीता को कुछ काल के लिए निवास करना पडा था | इन्द्रकामिनी नमक अप्सरा ने लक्ष्मण का व्रत भंग करने का छल किया | उसने लक्ष्मण के बिस्तर पर अपना कर्णभूषण डाल दिया | फिर शक वश कर्णभूषण की पड़ताल की गयी और वह सीता जैसा निकला तब से राम के ह्रदय में सीता और भाई लक्ष्मण के सम्बन्ध को लेकर संदेह पैदा हो गया | और राम ने गोंडो की सहायता से लक्ष्मण को आग में जला दिया पर लक्ष्मण को आग न जला सकी लेकिन तब से दोनों भाइयो में मनमुटाव बना रहा | बघेलखंड एक स्थान्वाची शब्द है | यंहा बघेलो का निरंतर राज्य बने रहने के कारण इस खंड का नाम बघेलखंड हो गया | बघेलखंड के नामकरण के कारण ही इस खंड की बोली बघेली कहलाई | पुराण युग में इस खंड के दो भाग थे एक मेकल प्रदेश तो दूसरा विराट प्रदेश मेकल का वर्णन श्रीमद भागवत गीता में भी है | इस प्रकार पुराण युग के उत्तर और दक्षिण दो भाग उल्लेखित हैं | बागुड़ा के इतिहास में भी इसका उल्लेख मिलता है | जिसमे बैरगा राजा का अनेक गीतों में उल्लेख है |क्रमशः अनेक राजाओं के उत्थान – पतन के बाद १२३३में यंहा बघेलवंश की सत्ता कायम हुई |इस तरह रामायण ,पुराण और इतिहास कि लम्बी अवधि को पार करती हुई इन समस्त घटनाओं और विचारधाराओं यंहा के साहित्य व संस्कृति से लेकर बघेल राजाओं के जीवन का प्रभाव भी कई रूपों में पडा | बघेल वंशीय राजाओं का धर्म शैव था इनके तमाम राजकीय मंदिरों व सामान्य जनमानस के लिए इनके द्वारा बनवाये गए मंदिरों में शिव की स्थापना ही दिखती है | लेकिन यंहा की आदिवासी संस्कृति व धार्मिक अनुष्ठानिक भिन्नता पूर्व से ही रही है और आज भी विद्यमान है | बघेलखंड की माटी में लगभग २००००० की संख्या में जैन भी हैं जो आये तो बुन्देलखण्ड से हैं लेकिन वर्तमान में इन पर बघेली संस्कृति का ज़्यादा प्रभाव परिलक्षित होता है | मध्यप्रदेश को

सामाजिक-सांस्कृतिक दृष्टिकोण से चार प्रमुख क्षेत्रों में बांटा गया है – बुंदेलखंड, मालवा, निमाड़ और बघेलखंड। मध्यप्रदेश के उत्तरपूर्वी भाग में बघेलखंड अंचल स्थिति है, इसके अंतर्गत सीधी, रीवा, अनूपपुर, सिंगरौली, शहडोल, सतना, उमरिया, उत्तरप्रदेश का सोनभद्र जिला व साथ ही पूर्वी इलाहबाद का क्षेत्र शामिल है | यंहा जगह–जगह पर धरातल से सहसा उठी हुई विंध्य पर्वतमालाओं का उदर विदीर्ण करतीं नदियां बहती हैं | उत्तर मे तमस और बीहर नदियों के मंथर प्रावाह है तो दक्षिण मे नर्मदा और सोनभद्र का उद्गम स्थल | पूर्व भाग पर्वतमालाओं का देश है जंहा घने जंगलों और चट्टानो के बीच "माड़ा" जैसी गुफाएँ हैं | पश्चिम मे सोहागी ,छुहिया ,हरदी ,तथा बहरापानी घाटियों का मनोहर दृश्य है | यंहा कैमोर और मेकल दो पर्वत हैं, कैमोर विंध्याचल पर्वत की एक भुजा है जो बघेलखण्ड को 109 मील से भी ज़्यादा घेरे है | गोविंदगढ़ से आगे यह दो शाखाओं मे विभक्त हो जाता है | कैमोर से अनेक नदियां बहकर गंगा –यमुना की ओर निकलती हैं| मेकल पहाड़ मे प्रसिद्ध अमरकंटक है जिसे कालीदास ने मेघदूत मे "आम्रकूट" कहा है | नर्मदा को रेवा और सोन को पुराणों मे "हिरण्यवाह" कहा गया है | बघेलखण्ड भूभाग 14794 वर्गमील तक फैला है| इसमे 6 जिले एवं 9603 गाँव हैं | मध्यप्रदेश के बघेलखण्ड मे सीधी जिला अपना ऐतिहासिक स्थान रखता है, यह राज्य के उत्तर–पूर्व छोर पर स्थित है | सीधी जिले का प्राकृतिक, सांस्कृतिक, और ऐतिहासिक महत्त्व है | सोन यहाँ की महत्वपूर्ण नदी है | यह नदी प्राकृतिक संपदा से भरपूर है | सिंगरौली बहुत बड़ा कोल उत्पादक क्षेत्र है | इससे देश के कई बड़े उद्योग क्षेत्रों मे कोयले की आपूर्ति पूरी की जाती है तो दूसरी ओर यहाँ समाज के विशिष्ट संस्कृति से जुड़ा हुआ अनुसूचित जन जातियो का विशाल इतिहास है | जिले में कैमूर, केहेजुआ और रानिमुन्ड घाटी में विशाल दृश्य की ज्वाला और फूलो का खूबसूरत नजारा है | भीष्म पर्व अध्याय चार में पाली गाँव के निकट महाभारत कालीन खंडहरों के अवशेष पाए जाने का उल्लेख है | पाली शहडोल जिला अंतर्गत का एक गाँव है |" बघेलखंड के इतिहास के केंद्र में बांधवगढ़ है | बांधवगढ़ रीवा राज्य का सुदृढ़ एवं दुर्गम दुर्ग है |यह दुर्ग सागर सतह से २६६४ ऊँचे पर्वत पर स्थित है | पुरातत्व की दृष्टि से भी इसका वैशिष्ट्य उजागर है | बघेल शाशको के पूर्ववर्ती नरेशो के लिए यह महत्वपूर्ण दुर्ग था | तेरहवीं शताब्दी में महाराज कर्ण देव को यह किला कलचुरी नरेश द्वारा दहेज़ में मिला था | बघेलो की समृद्धि के केंद्र बांधवगढ़ ने अनेको युद्धों को देखा था |प्राचीन ग्रंथो बघेलखंड का एक नाम कारुष जनपद भी मिलता है | कारुष का शाब्दिक अर्थ क्षुधा होता है | बघेली लोक जीवन अभावो और संकतो से त्रस्त रहा यह तो नहीं कह सकते लेकिन समृद्ध नहीं रहा यह भी सत्य है | यही कारण रहा होगा की इसका नाम कारुष रखा गया | जनश्रुति है की कारुष नाम इंद्र ने दिया था | यानी बघेलखंड का एक बड़ा क्षेत्र कारुष जनपद था जंहा आज भी जंगली जातियां बसती हैं |प्रागैतिहासिक काल के साहित्यिक और सांस्कृतिक साक्ष्य बघेलखंड की घाटियों में मौजूद हैं |एतिहासिक काल में यह जनपद मगध साम्राज्य के अंतर्गत आ गया | चाणक्य की चर्चित कृति अर्थशाश्त्र में कारुष जनपद के हाथियों का वर्णन मिलता है |मगध साम्राज्य के पतन के बाद गुप्त साम्राज्य का उत्कर्ष हुआ और तब यह राज्य हर्षवर्धन के अधीन हो गया |बघेलखंड के एक छोर पर आम्रकूट (अमरकंटक) तो दुसरे छोर पर चित्रकूट अवस्थित है |

भौगोलिक स्थिति -: बघेलखंड मध्यप्रदेश के उत्तरपूर्वी क्षेत्र में स्थिति है | बघेलखण्ड क्षेत्र के अंतर्गत सीधी, रीवा, अनूपपुर, सिंगरौली,शहडोल, सतना, उमरिया, उत्तरप्रदेश का सोनभद्र जिला व साथ ही पूर्वी इलाहबाद का क्षेत्र शामिल है | बघेलखण्ड प्रकृति के आपूर्व संदर्यों का देश है | यंहा जगह –जगह पर धरातल से सहसा उठी हुई विंध्य पर्वतमालाओं का उदर विदीर्ण करतीं नदियां बहती हैं | भौगोलिक दृष्टी से देखने पर सम्पूर्ण बघेलखंड अनेक पर्वत मालाओं, छोटी-बडी नदियों,ऊंचे,-नीचे भूखंडो तथा सघन वनों का क्षेत्र है |सीधी जिले में माड़ा के पास अनेक गुफाएं हैं जो आज भी दर्शनीय हैं | वहीं पश्चमी खंड में अनेक घाटी- छुहिया घाटी,कैमोर और मेकल पर्वत मालाएं हैं |कैमोर इस खंड का सबसे बड़ा पहाड़ है |इस पर्वत से

कई नदिया प्रवाहमान होती हैं |बांणभट्ट की साधना स्थली भवरसेन जंहा सोन, बनास और महान नदियों का संगम है यंहा ये तीनो नदिया एक साथ पहाड़ तोड़कर निकलती हैं यंही बाणभट्ट ने अपनी कुटी बनाकर विश्व के प्रथम उपान्यास **"कादम्बरी** "की रचना की | बगदरा के सघन वनों में यंहा किसी भी कोने खड़े होकर काले हिरन , बाघ ,शेर और नीलगायो का अवलोकन किया जा सकता है | बगदरा के अलावा बांधवगढ़ के जंगलो में भी मनोरम दृश्य एवं जंगली जानवरों का अवलोकन किया जा सकता है | यंहा पर्यटकों के लिए कई ऐसी अद्भुत जगहे हैं और साथ ही राजवंशीय ज़माने के रेस्टहाउस हैं जंहा ठहरा जा सकता है |

ऐतिहासिक परिचय -: एतिहासिक तथ्यों के आधार पर बघेलखंड मात्र ४०० वर्षो का साम्राज्य है |तेरहवी शाताव्दी में व्याघ्रदेव ने अपनी राजधानी बांधवगढ़ बनाकर एक वृहद् भूखंड को प्रभुता प्रदान की | क्रमशः राज्य वृद्धि होती गयी और व्याघ्रदेव के पुत्र कर्णदेव ने इस प्रभुता का विस्तार किया और क्रमशः इस वंश के २२वे महाराज विक्रमादित्य ने १५९७ में अपनी राजधानी बांधवगढ़ से बदलकर रीमा या रीवा बनाया यह नाम रेवा यानी नर्मदा से प्रभावित था|बघेलखंड का यह स्वरूप १८६२ इसवी में निश्चित हुआ जिसमे बरौंधा,मैहर,कोठी,सोहावल,नागौद और जसो रियासतों को शामिल किया गया |और पोलोटिकल एजेंट कर्नल एडबर्ड काल्बोर्न ब्रईकोर्ट ने अपने आदेश सन १९७२ में पहली बार बघेलखंड का प्रयोग किया था |१२२० विक्रम में अन्हल्वारा पाटन के सोलंकी आरन्योरान्य के व्याघ्र पल्ली या या बाघेला ग्राम की जागीर मिली तभी से इस ग्राम के सोलंकी बघेल कहलाने लगे |उन्ही के वंशज व्याघ्रदेव बघेल संवत १२३३-३४ इस भूखंड में आये और सबसे पहले मार्फा किला को जीतकर बस्ती बसाई ,जिसे बघेल बाडी कहा गया |अपने कथा सरितसार के अंत में रूपमणि शर्मा ने ने भी कुछ बघेल वंश का वर्णन किया है –

"प्रचंडारि व्युहाटवि मथन भूमि ध्वज समो ,
बघेलाना वंशो जयति विदितो भूमि वलये \"

अकबर नामा में भी यंहा के राजाओं को बाघों का ज़मीदार लिखा गया है |अकबर ने १५६३ में कसौटा के राजा मेदनी सिंह को अलग से सनद दे दी और बघेलखंड की सीमा को कम कर दिया |
सन १६५३ में महाराज विक्रमादित्य ने बाघों अर्थात "बांधवगढ़ "से राजधानी "रीवा"लाकर कर दिया तब से औरंगजेबनामा तथा अन्य मुस्लिम इतिहासों में रीवा के शाशको को रीवा का ज़मीदार कहा गया | एकोमा बांधवगढ़ में भी विक्रमादित्य को जागीरदार कहा गया है |इस प्रकार १८५३ इसवी से यंहा की समस्त परम्पराएं पत्तो तथा संधि पत्र आदि में बघेलखंड शब्द का ही प्रयोग होने लगा |अन्य कई देशी रियासते शामिल हो गयी और इसकी सुनिश्चित सीमा भी निर्धारित हो गयी |डॉ.जार्ज ग्रियर्सन ने बघेली बोलने वालो की संख्या रीवा कोठी और सिहावल बतायी इसे बोलने वालो की संख्या २७०८५२६ लिखी | बघेली बोली का दूसरा नाम रिमाई भी है क्यों की यंहा रीवा रियासत रही है | अवधी के दक्षिण में बघेली का क्षेत्र है जिसका केंद्र रीवा राज्य है किन्तु यह दमोह ,जबलपुर,मंडला,तथा बालाघाट के जिलो तक फ़ैली है और इसे बोलने वालो की लगभग संख्या ५० लाख हो जाती है | इस प्रकार इस बोली का क्षेत्र उत्तर में यमुना नदी के दक्षिण बांदा ,फतेहपुर ,हमीरपुर के परगने से लेकर कसौटाऔर शंकरगढ़ तक,पश्चिम में कोठी और सोहावल से मैहर के आस-पास तक ,दक्षिण पश्चिम में कटनी,जबलपुर,दमोह और बालाघाट के कुछ गाँव तक ,दक्षिण में अमरकंटक और मंडला तथा दक्षिण पूर्व में चांगभखार के गाँव कोटाडोल ,करेंजिया और भगवानपुर तक ,पूर्व में सिंगरौली तथा देवसर तक |

बघेलखंड सृष्टी के विकसित काल से अनुपम, अरन्यभा, लालित्य दृश्य वाणी – मन हृदय वपुष संस्कार समर्थ जल के परिपूर्ण रहने के कारण प्रकाशित आत्माओ के अल्प परमोज्जवल प्रकाश को अपने उर में संजोए हुए है। ऋषि मुनि, संत सिद्ध योगिओ ने इसे सिद्ध पीठ बना दिया। अलौकिक पथिको के ब्राादिस्तपनी पल्लवों से यह भूमि चिंताकर्षित आखेट को रंजित कराती हुई समय- सौन्दर्य सुसमताम राजकुलो को अपनी ओर आकर्षित कराती रही है। सुविकसित रुचियों-वस्तियो के विस्तार का इन्गन करती हुई यह भूमि मनीष– मुनि, सिद्ध भक्त, कलाकार, नायिक साहित्य मूर्तियों व सर्वक्षेत्रिक जनों को जन्म दे यह भुमि धन्य हो गयी।इस उर्वर भूमि कृष्ण मृग से लेकर सफ़ेद शेर तक पाए जाते रहे हैं।_पुरानो में यह कारू जनपद के नाम से जाना जाता रहा है। जो अन्य जनपदों की अपेक्षा संस्कृति समृद्ध रहा है। आधुनिकता से अछूता आदिवासी प्रधान क्षेत्र केहजुआ, कैमोर के अंतराल मे सोनभद्र के स्नेहिल आंचल में किलकित भूमि अपने अप्रतिम के लिए आज भी उल्लेखनीय है।

यह सिद्ध मुनिओ की तपस्थली व कर्मस्थली के साथ – साथ सफेद शेर की अनुकूलित भूमि भी है। यहाँ के अनगढ़ पत्थरो ने चिंतन के लिए साहित्यकारों को उत्प्रेरित किया और ऊबड – खाबड़ ,पथरीली भूमि ने विषय सामग्री प्रदान की। एतिहासिक दृष्टि से बघेलखण्ड का संबंध भारत के अत्यंत प्राचीन और गौरवशाली युग से रहा है।रामायण युग मे यह भूभाग कौशल प्रांत के नाम से प्रसिद्ध था। पुराण युग मे इसके दो भाग थे एक मेकल प्रदेश तो दूसरा विराट प्रदेश। मेकल प्रदेश का वर्णन श्रीमदभागवत गीता मे भी आया है। विराट प्रदेश का संघ राज्य सोन के किनारे था जिसकी राजधानी विराट नगरी थी जिसे आजकल सोहागपुर कहते हैं। यंही पर बरपागंगा है जिसका उल्लेख भृगु संहिता मे मिलता है।शहडोल जिले के पाली गाँव मे आज भी महाभारत कालीन खण्डहर के अवशेष प्राप्त हैं।

सामाजिक परिचय- लोक संस्कृति का अर्थ लोक दर्शन या लोक व्यवहार है।कृति,प्रकृति और संस्कृति परस्पर गुंथे हुए हैं। कृति पहले प्रकृति होती हैं। लोक रूचि और लोक कला के योग से प्रकृति का रुपांतरण कृति हो जाता है। कृति की प्रकृति का कलात्मक अनुरूप कहा जाता है। संस्कारित कृति संस्कृति है। अर्थात कृति ,प्रकृति और संस्कृति का कुल गोत्र एक ही है। संस्कृति की शुरुआत व्यक्ति के बहुत निकट से होती है।और दूर बहुत दूर तक फ़ैल जाती है।यंहा तक की समूचे लोक में फ़ैल जाती है और लोक संस्कृति का रूप ग्रहण कर लेती है।लोक संस्कृति व्यक्ति के उठने-बैठने, चलने-फिरने, चुल्हा-चक्की, खेल-कूद और समाज के साथ निर्वाह किये गए नाना प्रकार के व्यवहारों का एकीकृत रूप है। लोक और संस्कृति एक दुसरे से गहरे स्टार से जुड़े हैं। लोक संस्कृति को आस्तित्व देता है और संस्कृति लोक को व्यक्तित्व देती है। लोक संस्कृति का निर्माण करता है फिर उसी से ढलता है। संस्कृति का निर्माण मानव के लिए स्वाभाविक है। किन्तु संस्कृति स्वयं मानव की कृति है और व्यक्ति संस्कृतिकरण की प्रकिया द्वारा उसे अपनाता है। कुछ इसी तरह मनुष्यों का एक समूह जो अपनी इच्छाओं ,क्रियाकलापों व जीवन के सफल संचालन हेतु संगठित होकर तथा आपसी सहमती से बनाए हुए नियमो में आबद्ध होकर अनुशासित होकर रहने लगता है उसे समाज कहते है।वैसे भी समाजशास्त्रीय परिभाषा के अनुसार "सामाजिक संबंधो के जाल को समाज कहते हैं।"यह जाल बघेलखंड की भूमि पर ही अत्यधिक रूप में फैला हुआ है।जंहा अमीरी-गरीबी लोक परम्पराएं,अंधविश्वास ,टोना टोटके,जातिगत मान्यतायें ,बड़े छोटे परिवार,कुल ,जन्म,विवाह,आदि सोलह संस्कारों से भरा पडा है फिर अलग अलग जातियों की भिन्न-भिन्न जातिगत परम्पराएं के साथ जीवन यापन कर रहा है। बघेलखंड में निम्न लिखित जातियां निवास करती हैं –

१.बघेल-ये चालुक्य वंश के क्षत्रिय हैं जो समूचे बघेलखंड पर अपना एक क्षत्र राज्य स्थापित रखे थे।

२.कर्चुली-कर्चुली मूल रूप से तो इस खंड के राजा तो नहीं हैं किन्तु ये वीर क्षत्रिय के रूप में बघेलखंड में जाने जाते हैं |ये रीवा जिले के रायपुर खंड में निवास करते हैं |

३.परिहार-परिहार भी श्रेष्ठ लेकिन सरल एवं बौद्धिक क्षत्रियो में गिने जाते हैं | ये भी बघेलखंड में प्रायः हर जगह निवास करते हैं |

४.चौहान-क्षत्रियो की एक उपजाति तथा पौरुषवान ,जुझारू एवं लड़ाकू जाति के रूप में मानी जाने वाली यह बघेलखंड की प्रमुख जाति है |

५.ब्राम्हण-बघेलखंड में 79 प्रकार के ब्राम्हण पाये जाते हैं इनका भी अपना-अपना क्षेत्र एवं गाँव हैं |

६.बनिया-यह व्यापार करने वाली बघेलखंड की प्रमुख जाति है |

७.तेली-तिल से तेल निकालने वाली यह एक प्रकार की शूद्र जाति है ये भी समूचे बघेलखंड में पायी जाती है |

८.कोरी-बघेलखंड के दक्षिण भाग में अधिकाधिक संख्या में निवास करने वाली यह जाति कपड़ा बुनकरों में आती है |

९.अहीर-वर्ण व्यवस्था के आधार पर अहीर जाति को सम्पूर्ण भारत वर्ष में कृष्ण वंशीय माना जाता है |बघेलखंड में यह जाति गाय चाराने उन्हें पालने एवं दुग्ध उपार्जन का ही कार्य करती है |

१०.गड़रिया-एक पिछड़ी जनजाति जो दक्षिण पूर्व भाग में रहती है |छुटपुट रूप से यह समूचे बघेलखंड में पायी जाती है |

११.कुम्हार-यह जाति भी बघेलखंड की पिछड़ी जाति है |इस जाति का काम मिट्टी के बर्तन बनाना है |

१२.डोम(मेहतर)-यह बघेलखंड के सभी नग्र एवं बड़ी बस्ती में पायी जाती है | इनका मूल कार्य मैला उठाना है |

१३.बसुहार-बांस के बर्तन बनाने के कारण इस जाति का नाम बसुहार पडा यह सूद्र वर्ग की जाति है बघेलखंड के मध्य उत्तर में ज़्यादा संख्या में निवास करती है |

१४.चमार-यह चमड़े के जूते चप्पल बनाने वाली एक शूद्र जाति है बघेलखंड में मरे हुए पशुओ को हटाना व उसके चमड़े निकालकर चमड़े का धंधा करना इसका प्रमुख कार्य है |

१५.गोंड-.यह वनांचल की जाति है जो दक्षिण और पूर्व के जंगलो में ज्यादा बसती है |इन्हें आदिवासी माना जाता है बघेलो से पूर्व ये यंहा के राजा हुआ करते थे |

१६.बैगा-बैगा भी आदिवासी जाति है इसका काम खेती करना है यह भी जंगल में निवास करने वाली जाति है |

१७.पनिका-एक पिछड़ी जाति जो वस्त्र बुनने का कम करती है |

१८.कोल-कोल जनजाति पिछड़ी जाति है |बघेलखंड में कोल अपने आप को सबरी की संतति मानते है | ये खेती करने का कार्य करते हैं ज्यादातर कोल बड़ी जातियों के बाशिंदे हैं |

१९.भूमिया-यह आदिवासी कोटि की एक जाति है यह भूत-प्रेत बाधा को झाड़ने फूकने का काम करती है |

२०.खैरवार –आदिवासियो की एक जाति जो खैर से कत्था बनाने का कार्य करती है | इसी कार्य के कारण ये खैरवार कहे जाते हैं | ये सीधी जिले के चितरंगी मे ज्यादा संख्या में निवास करते हैं |

२१.पाव- (पाइक)यह भी जंगल के आस- पास रहने वाली अदिवासियो की एक प्रकार जाति है | इनकी संख्या बघेलखंड में बहुत अधिक नहीं है |

२२.कमर-यह गोंडो की ही एक उपजाति है |

२३.दरजी-शूद्र साम्प्रादाय की एक प्रजाति जो कपड़ा सिलने का कार्य करती है |

२४.काछी-यह पिछड़ी जाति है जो ठाकुरों की ज़मीन में सब्जी भाजी लगाने का कार्य करती है |

२५.खटिक-यह गाँव-गाँव घूम कर व्यापार करने वाली जाति है |

२६.बैसवार-यह परिश्रम करने वाली जाति है यह बघेलखंड के चितरंगी तहसील में अधिकाधिक संख्या में निवास करती है|

२७.कहार-यह जाति प्रत्येक गाँव में रहती है जो सम्पन्न घरो में पानी भरने का कार्य करती है|

२८.बारी-यह पत्तल बनाने का कार्य करती है|

२९.लोहार-.लोहे से औज़ार बनाने वाली यह जाति हर गाँव में अवसयत्कानुसार निवास करती है|

३०.बढ़ई –यह लोहार की ही तरह की जाति है पर यह लकड़ी का कार्य करती है|

३१.कुर्मी-यह बघेलखंड की प्रमुख जाति है इसका मुख्य कार्य खेती करना है|

३२.कोटवार-यह बघेलखंड में काफी कम संख्या में लेकिन हर जगह पायी जाने वाली जाति है |इसका प्रमुख कार्य गाँव में चौकीदारी करना व खेती करना है|

३३.बहेलिया-यह बघेलखंड में पायी जाने वाली शिकारी किस्म की जाति है| यह भी प्रायः हर जगह पायी जाती है|

३४.कंजर-यह बघेलखंड में ही निवास करने वाली जाति है लेकिन इसका निवास अस्थायी है | यह पूरे बघेलखंड में घूम कर शिकार एवं भिच्छाटन का कार्य करती है| यह सीधी जिले के मझौली तहसील में पाए जाते हैं|

३५.बसदेवा-यह भिच्छाटन कर अपना भरण-पोषण करने वाली जाति है |यह बसदेवा गाथा गायन परम्परा के संवाहक के रूप पमें भी जाने जाते हैं|

३६.भरथरी-यह बघेलखंड की घुमंतू जाति है सारंगी बजाकर भिच्छाटन करना इनका प्रमुख कार्य है|

३७.कुंदेर –बघेलखंड में यह पिछड़ा वर्ग में आती है इस जाति का प्रमुख कार्य लकड़ी की कारीगरी करना है |ये लकड़ी के खिलौने कूंद कूंद कर बनाते हैं यही कारण है की इस जाति का नाम कुंदेर पड गया|

३८.कचेर-यह जाति भी पिछड़ा वर्ग में आती है यह मूल रूप से मनिहार का कार्य करती है जो अक्सर जुलाहे किया करते थे|

३९.कलार-यह गोंडो की ही उपजाति है जिसका प्रमुख कार्य शराब बनाना है|

४०.घसिया-यह भी गोंडो की ही उपजाति मानी जाती है जो विवाह उत्सव में गुदुम बाजा बजाने का कार्य करती है|

४१.भील-यह कोल की ही तरह की जाति है जो कृषि कार्य का काम करती है|

इस प्रकार विभिन्न प्रकार की जातियों से बघेलखंड की माटी विकसित है तथा यह भी दिखाई देता है की इन जातियों का कार्य बघेलखंड में वैदिक वर्ण व्यवस्था के अधार पर ही है |जो बोझिल है तथा मानवीय संबंधो की मधुरता में रोक लगाती है |एक–दुसरे के साथ उठने बैठने एवं खाने-पीने तथा आत्मसात करने की प्रविति इसी वर्ण व्यवस्था के कारण नहीं पनप- सकी है |वर्तमान में जाति विहीन समाज का निर्माण जारी है|

बघेलखंड की अपनी रीति-रिवाज़ अपनी-अपनी जातीय परम्पराएं तथा जीवन यापन के अलग-अलग ढंग हैं| जीवन निर्वाह में विभिन्नता के अनेक दर्शन होते हैं फिर भी एकता लगन तथा परिश्रम ही इस खंड की पूंजी है|

बघेलखंड के प्रमुख समाजिक गुण:

(क)यंहा के सामाज मे जाति प्रथा कि कट्टरता अधिक है|

(ख)जातियों मे भेद-प्रभेद का आधिक्य जैसे कि गोण्डों मे 2अलग–अलग अंतरजातियाँ हैं|

(ग) विवाह संस्कार प्रत्येक जाति के लिए आवश्यक है तथा हिन्दवानी और गोंडी दोनों के विवाह संस्कार अलग–अलग हैं|

(घ) आदिवासियो मे बहुपत्नी रखने ,प्रेम विवाह ,एवं कला-कौशल के अधार पर दूसरों कि औरतों को जीतकर अपनी पत्नी बना लेने का भी रिवाज है |

(च) गोंडी संस्कृति कि जातियों मे "गोदना" गोदाने कि विख्यात परंपरा है |

(छ) आदिम सभ्यता का प्राभाव यंहा के जनजीवन मे सहज ही झलकता है|

(ज) सामाजिक रीति – रिवाजों का आज भी कट्टरता से पालन किया जाता है |

|(झ) तरह –तरह के आभूषण पहनने एवं उसे सहेज कर रखने कि परंपरा है |

(ट) अनेक जातियों के होते हुए भी जातियों में भेद –प्रभेद है इसलिए इनमे श्रेष्ठ और निम्न के दर्शन होते हैं |

(ठ) विवाह संस्कार प्रत्येक जाति का मूल धर्म है | पति-पत्नी के सम्बन्ध बिना वैवाहिक रीति का सम्पादन नहीं हो सकता | किन्तु जातीय आधार पर अपनी-अपनी रीतियाँ हैं और उससे कट्टरता के साथ उच्च कोटि की जातियों में वैदिक रीति से विवाह किया जाता है | निभाने की भी परम्परा है | कंही ऐसी भी जातिया हैं जिनमे दूध सम्बन्ध बचाकर भी विवाह कर दिया जाता है |कंही कंही गोत्र को देखकर विवाह किया जाता है | किन्तु निम्न कोटि की जातियों में कुछ वादिक रीति के अलावा उनकी जतीय परम्परा में जैसे अहीरों में बढनी की पहले शादी करा दी जाती है फिर विवाह की रश्म शुरू होती है | कुछ जातियो में अग्नि का मिलन करवा दिया जाता है | पिछड़ी जनजातियो में कई विवाह कर लेने या बहुपत्नी रखने की परम्परा है | गोंड ,कोल ,चमार ,कोरी,आदि कुछ ऐसी भी जातियां हैं जिनमे चचा-ताऊ के लडकी से भी विवाह हो जाता है |

(ड) बघेलखंड में भी पुरुषो की आपेक्षा नारियो को उतनी स्वतंत्रता, अधिकार व सामाजिक मान्यताएं प्राप्त नहीं हैं जबकी महिलाओं की संख्या पुरुषो की आपेक्षा ज़्यादा है | गृह सीमा में बंधी हुई ये अपना जीवन निर्वाह कर रही हैं | सोने चांदी व लाख के गहने पहनती हैं |यंहा पुत्र उत्पत्ति पर जो सुखानुभूति देखने को मिलती है वह पुत्री के पैदा होने पर नहीं |

(ढ)कुछ वर्षो पहले यंहा मूल उद्द्योग खेती हुआ करती थी लेकिन अब सिंगरौली जैसी कोल माइंस होने के कारन २५ कोयले एवं बिजली की कंपनिया आ गयी हैं और आर्थिक रूप से यंहा के लोग थोड़ा मज़बूत हुए हैं तो कंही इन्ही के कारण पलायन के शिकार भी हुए हैं |

(ण)यंहा के सामाजिक स्थिति को बिगाड़ने वाले लोगो के प्रति समाज ही फैसला करती है | लेकिन समय के साथ बहुत कुछ बदला है इस सामाजिक ढ़ाचे का भी पतन हुआ है धीरे –धीरे समाज की वह स्थितियां भी बदलती नजर आ रही हैं जो आपसी सुलह और सामाजिक दायरे की थी |कहा जाता है की पहले यह भी एक परम्परा रही है कि अपने गाँव में लोग पुलिष का आना सम्मान के खिलाफ मानते थे बिना गाँव वालो की अनुमति पुलिष गाँव में न तो प्रवेश कर सकती ठी और न ही सम्बंधित व्यक्ति पर मुकदमा कर सकती थी अगर उस व्यक्ति ने गुनाह किया है तो समाज ही उसे सजा देता था परन्तु समय और समाज के तीव्र गति से बदलते रूप ने इसे भी विलुप्तता की कगार पर लाकर खड़ा कर दिया जो सुव्यवस्थित समाज का अभिन्न अंग थी|

(त) बघेलखंड में त्योहारों को मनाने का भी अपना एक अलग ढंग है कुछ त्यौहार तो विशेष महत्व रखते हैं तो कुछ त्यौहार सामान्य ढंग से मना लिए जाते हैं | प्रमुख त्योहारों में दशहरा, दीपावली ,होली,नागपंचमी,तीजा ,जवारा आदि हैं |सामान्य त्योहारों में खाजुलियाँ ,हरछठ ,शिवरात्री,बहुरा,करवा चौथ, भाई दुइज, खिचडी, बसंत पंचमी, रामनवमी, आदि इनमे से कुछ त्यौहार मेले के रूप में भी मनाये जाते हैं |

(थ) दहेज़ प्रथा बघेलखंड में प्रचलित तो है लेकिन यह ब्राम्हण ,क्षत्रिय ,वैंश्य तक ही सीमित हैं |

(द) बहुपत्नी प्रथा भी बघेलखंड में मानी है अब धीरे-धीरे सामाजिक जागरूकता के कारण इसका लोप हो रहा है |

(ध)शूद्र वर्ग के समाज में अनेक देवी- देवताओं की प्रथा है ये इन्हें प्रसन्न करने के लिए बली भी चढाते हैं कहा जाता है इनमे पूर्व में नरबली की परम्परा रही बाद में बघेलखंड के राजा विक्रमादित्य ने इस परम्परा पर अंकुश लगाया और तब से पूर्णरूपेण बंद है |पशु बलि देने की परम्परा को **"जपान"** कहते है |कोल जाति के लोग अपने देवी देवताओं को प्रसन्न करने के लिए विभिन्न प्रकार के नाटकीय करिया –कलाप भी करते हैं जैसे –जीभ में बाना छेदना ,हाथ में छेदना ,गर्म खप्पड़ हाथ में लिए रहना ,दांत से गर्म लोहे कि सांकल उठाना, कील गडी खड़ाऊ पर चलना व् इनके स्थानीय देवी-देवताओं में बघउत, बंदरिया, बाबा, सन्यासी, स्थानीय देवताओं में दानो, बरम, महामाई, बघेसुर, छोटकादेव, बडकादेव, यादोराय, घमसान, पंडा, लक्षिमन ,काली, बदरिया आदि हैं|

(न)आदिवासियों की कुछ अपनी जातीय परम्पराए हैं ये अपने उत्सव को महुए की शराब पीकर मनाते हैं और रात भर अपने जातीय कला रूप करमा ,शैला ,ददरिया ,गीत नृत्य करते हैं जिसमे पुरुष और महिला सम्यक रूप से भाग लेते हैं|

(प) सोलह संस्कारों का पालन यंहा की जातियां श्रद्धा पूर्वक करतीं हैं|

(फ) बघेलखंड में निवासरत जातियां अपने गोत्र में विवाह नहीं करती | यंहा गोत्र का मतलब पौराणिक काल से चले आ रहे गोत्र विभाजन से है | जैसे की गोंड जाति के एक गोत्र में पांच कूरे यानी अलग-अलग तरह के गुणानुसार गोंड होते है वो सब अपने गोत्र में विवाह नहीं करेंगे | ऐसे ही सामान्य जातियों में भी होता है जैसे कोई कश्यप गोत्र का है तो वह एनी कश्यप गोत्र वालो से शादी नहीं करेगा |

(ब) जातीय पंचायतें जातिगत झगड़ो का निर्णय कर लेती हैं|

(भ)यंहा के जनजातीय समूहों में स्त्रियों की जनसंख्या ज्यादा होती है पुरुषो की आपेक्षा|

(म) पिछड़े वर्ग का सामाजिक ढांचा श्रम पर निर्भर होता है|

(य) बघेलखंड में जनजातीय लोक संगीत की छाप देखने को मिलती हैं| इनका लगभग पूरा लोक साहित्य मौखिक परम्परा में संरक्षित है|

(र) बघेलखंड के स्थानीय देवी देवताओं का उल्लेख संस्कार, गीतों कृषि गीतों, जातीय गीतों, नृत्य गीतों, अनुष्ठानिक गीतों व मन्त्र गीतों में मिलता है|

(ल) बघेलखंडी जनजातियाँ अंधविश्वास में जीती हैं ,इनका विशवास जादू-टोने झाड- फूंक पर होता है या दुसरे शब्दों में यह कहें की इनका प्रकृति और प्रकृति प्रदत्त चीजों पर विष्वास ज्यादा है|

(व)कुछ जातियों में विशेष तरह की विवाह प्रथा- हम आपको बता दे की जिस विशेष तरह की विवाह परम्परा का जिक्र हमने आप से किया दरअसल वो यादव जाति में पारम्परिक रूप से एक वैवाहिक परम्परा का चलन रहा है जो अब धीरे-धीरे नाम मात्र की रह गयी है पहले अहीरों का विवाह अहीर के लड़के- लड़कियों की अपनी मर्जी से हुआ करता था जैसा की आज भी बघेलखंड की कुछ अदिवासी जातियों-जनजातियों में है | साथ ही अहीर जाति के लोग जब बरात आते थे तो रात का खाना खाने के बाद घर पक्ष की महिलायें और वर पक्ष के पुरुषो के बीच नृत्य प्रतिस्पर्धा रूप में हुआ करता थी | जिसकी कुछ शर्ते थी की एक महिला और एक पुरुष आमने-सामने नाचेंगे और वो दोनों एक दूसरे से न हारने की जिद के साथ प्रस्तुत हुआ करते थे | यदि नाचते-नाचते किसी स्त्री का पल्लू पुरुष के शरीर से छू जाए तो उसे पुरुष के साथ जाना पड़ता था और यदि किसी पुरुष का शरीर थकान के कारण महिला से छू गया तो महिला उसे अपने घर पति स्वरूप में स्वीकार कर ले जाती थी | यह नृत्य स्वयंबर था क्यों की नृत्य तब तक होता था जब तक की कोई हार या जीत का परिणाम न आ जाता था | इसमें भी दो तरह के विवाह हुआ करते थे एक तो माँ, बाप इसी नृत्य के दौरान अपनी लडकी के लिए योग्य वर ढूढ़ लिया करते थे और दूसरा लडकियां खुद अपना वर ढूढ़ कर नृत्य दौरान ही पुरुषो के शरीर से अपना पल्लू छुआ दिया करती थीं | विवाह की यह परम्परा कालांतर में बदलते-बदलते आज विलुप्त होने की कगार पर है | नृत्य आज भी होता है लेकिन विवाह की परम्परा कंही गायब है | इस सम्बन्ध में एक बड़ी सुन्दर

कथा याद आती है की जाति की पहचान उसके पारम्परिक कार्यो से हुआ करती थी , लडकी के माँ, बाप लड़के में पारम्परिक कार्यों की कार्य कुशलता देखकर अपनी बेटी का ब्याह दिया करते थे |

एक बार की बात है की एक लड़का एक लडकी से प्रेम का इज़हार करने के लिए उसके घर पहुच गया और जाकर लडकी के पिता से कहने लगा की मै आपकी बेटी से प्रेम करता हूँ और आपकी लडकी भी मुझसे प्रेम करती है अतः हम दोनों चाहते हैं की आप हमारा विवाह कर दे तब कुम्हार ने कहा की यह मिट्टी रखी है जाओ बर्तन बना डालो यदि तुम बर्तन बना लोगे तो मैं अपनी लडकी का विवाह तुमसे कर दूंगा और बर्तन नहीं बना पाए तो फिर तुम जानो | लड़का कुम्हार का ही था अतः उसने बिना देर किये मिट्टी के बर्तन बनाना शुरू कर दिया और करीब एक घंटे की अवधि में मिट्टी के चार-पांच तरह के बर्तन बना दिए और फिर कुम्हार ने अपनी बेटी का विवाह उस लड़के से कर दिया | यह परम्परा कालांतर में विलुप्त हो गयी लेकिन वो जोड़े आज भी हैं जो इस पारम्परिक विवाह प्रणाली से बने थे | कुम्हारों और यादवो के अलावा भी बघेलखंड की अन्य जातियां हैं जिनकी अपनी अलग तरह की विवाह प्रणालियाँ हैं |

साहित्यिक पड़ाव -: यहाँ के साहित्यिक पड़ाव की बात करे तो 19 वी शदी से ही यहाँ की साहित्यिक साधना प्रगति की आराधना अपनी सुरभि बिखेरने में तत्पर रही है | सोन-रेवा के कगारों की हरीतिमा की ही देन है ,बाणभट्ट की कादंबरी व हर्ष भारत जैसी पूत कृतिओ का प्रादुर्भाव हुआ है | सेनापति एवं पद्माकर की शैली में वृत्तानुपात प्रधान रचनाये लिखने का प्रचलन इस काल में रहा है| बघेली बोली मे लिखित साहित्य का आभाव है जबकि बघेली मे लोकसाहित्य प्रचुर मात्रा मे उपलब्ध है |लौकिक साहित्य ही लोकसाहित्य है | वैदिक साहित्य से भिन्न समस्त बाते लौकिक कहलाएंगी | यह लोक शब्द से उत्पन्न है डॉ.सतेन्द्र ने लोक साहित्य की परिभाषा निम्नानुसार दी है - वह समस्त बोली व भाषागत जिसमे निम्न तत्व सम्मिलित हो लोक साहित्य कहलाता है –

अ. आदि मानव में अवशेष उपलब्ध हो |

ब. परम्परागत मौखिक क्रम में उपलब्ध बोली या भाषागत अभिव्यक्ति हो जिसे किसी की कृति न कहा जा सके | जिसे श्रुति ही मन जाता है और जो लोक मानस की प्रविति में समाई हुई हो |

स. कृतित्व हो लेकिन वो लोक मांस के सामान्य तत्वों से युक्त हो की उसके किसी व्यक्तित्व के साथ सम्बन्ध होते हुए भी लोक उसे अपने व्यक्तित्व की कृति स्वीकार करे |"

विश्वास और आचरण
रीति रिवाज़
कहानिया, गीत तथा कहावते
लोक गाथा, नृत्य, चित्र आदि

अब यदि हम बघेली लोकसाहित्य की बात करे तो दीर्घकालीन यानी १०वी शताब्दी के पूर्व से ही चली आती दिखाई पड़ती है |१०वी शतब्दी में कर्णदेव का 'सारावली' ग्रन्थ प्राप्त होता है |उसके बाद क्रमशः धर्मदास ,सोनन नाई ,ब्रिजेश महाराज जय सिंह ,महाराज विश्वनाथ सिंह,महाराज रघुराज सिंह,आदि के अनेक ग्रंथो में लोकजीवन भरा पडा है |भले ही इन सबका साहित्य विशुद्ध बघेली साहित्य न हो परन्तु बघेलखंड के जनजीवन और लोकपरम्परा की छाया उसमे पर्याप्त मिलती है |यही नहीं गोस्वामी तुलसीदास जिनका साहित्य लोकजीवन का महत्वपूर्ण उपादान है बघेलखंड के चित्रकूट में ही रमे जो सतना जिले में आता है | बघेली लोकसाहित्य की परम्परा में विश्वास और मनोभूमि तथा विकास का क्रमिक वातायन प्राप्त होता है | कुछ विद्वानों के अनुसार अलिखित साहित्य ही लोकसाहित्य है | जो अलिखित है क्या उसे ही हम

लोकसाहित्य कह पाएंगे और जो लिखित है जैसे आल्हा, ढोला मारू, पंचतंत्र की कहानिया क्या ये सब लोकसाहित्य में नहीं आयेगीं | मेरा तो मानना है की हर वो साहित्य लोकसाहित्य है जो उस जीवन शैली भाषा को छूकर निकल जाए | किसी साहित्य में हमें सिर्फ यह देखना है की उसमे लोकमानस की अभिव्यक्ति हुई है की नहीं क्यों की लोकमानस ही लोकसाहित्य का निर्धारक तत्व है | बघेलखंडी लोकसाहित्य को निम्न भागो में विभक्त कर सकते हैं –

लोकगीत
लोककथा
लोकगाथा
कहावते
लोकनृत्य
पहेलियाँ
मन्त्र

वंही लोक गीतों को हम निम्नप्रकार से विभाजित हुआ पाते हैं -
बघेलखंड लोककलारूपों की वो अथाह जलराशि है, जंहा तरह–तरह की लोककलाए रत्नरूपों में अंतर्निहित है | वही बघेलखंड के मधुर लोकगीत यंहा के लोक जनजीवन की पीड़ा हर लेते हैं |उनकी रग–रग में साँस की तरह रची-बसी है | बघेलखंड सीधी, रीवा, सतना, शहडोल, सिंगरौली का पूरा भूभाग है | यंहा के लोकगीतों में यंहा के ऐतिहासिक, समाजिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक परम्परा के दर्शन होते हैं | मानव जन्म से मृत्युपर्यन्त तक बघेलखंड में गीत गाने की परंपरा है | जिन्हें कुछ इस प्रकार विभाजित किया गया है -

1.जन्म संस्कार गीत
2. उपनयन संस्कार (बरुआ)गीत
3.विवाह संस्कार गीत
4.मृत्यु संस्कार गीत
5 .ऋतू गीत (कृषि गीत)
6 .पर्व गीत
7 .अनुष्ठानिक गीत /देवी गीत
8 .जाति विशेष गीत
9 .लोक गाथा गायन
10.लोक कथा गायन
11 .लोकनाट्य गीत
12 .श्रम गीत (क्रिया गीत)
13 .नृत्य गीत
14 .मंत्र गीत
15.यात्रा गीत
16.खेल गीत
17.बनजोरबा गीत
१८.पितमा
१९.चिहुरी

लोकगीतों के बाद लोककथा रूपों की हम चर्चा करते हैं जिसमे हमें लोक कथाओं के विभिन्न अलग –अलग विषयगत भिन्नताएं देखने को मिलती हैं -

१.पशु –पक्षी सम्बंधित कथाएं

२.जानवरों सम्बंधित कथाएं

३.नीतिपरक कथाएं

४ धर्म संबंधी कथाएं

५.स्थानीय देवताओं सम्बंधित कथाएं

६.जातिगत कथाएं

७.भूत-प्रेत संबंधी कथाएं

८.जातक कथाएं

९.प्रेम परक कथाएं

१०.युद्ध संबंधी कथाएं

११.खेती किसानी संबंधी कथाएं

लोक गाथा गायन परम्पराओं की बात करे तो बघेलखंड में अलग-अलग जातियों में निम्न प्रकार की गाथा गायन परम्पराए चलन में हैं –

१.चदैनी

२.छाहुर

३.ललना

४.चंदनुआ

५.पदुम कंधइया

६.गढ़ केउंटी

७.रेवा –परेवा

८.भरथरी

९.नल-दयमन्ती

१०.राजा हरिश्चन्द्र

११.गोंडी

१२.शिव-पार्वती

१३.रानी केतकी

१४.आल्हा

१५.हरदौल

१६.ढोला म्हारू

बघेलखंड में कहावतो का अधिकाधिक्य प्रचलन है कहावतो के निम्नलिखित प्रकार हमें देखने को मिलते हैं –

१.कृषि संबंधी कहावते

२.नीतिपरक कहावते
३.जातिगत कहावते
४.पशु-पक्षी संबंधी कहावते
५.धर्म संबंधी कहावते
६.राजवंश संबंधी कहावते
७.तकनीक संबंधी कहावते

बघेलखंड मध्यप्रदेश के अन्य क्षेत्रो की तरह नृत्य प्रधानता वाला क्षेत्र तो नहीं है लेकिन यंहा जातिगत नृत्यों की बहुलता देखने को मिलती है |जातिगत नृत्यों की हम निम्नवत चर्चा कर रहे हैं –

१.करमा
२.शैला
३.गुदुम
४.अहिराई
५.अहिराई –लाठी
६.केहरा
७.सजनयी
८.दादर
९. कोलदादर
१०. मटकी
११.भगोरिया
१२.भीली
१३.ददरिया
१४.सुआ
१५कोलनहई
१६.चमरौही
१७.धोबिआई
१८.कोंहरौहीं
१९.जवारा
२०.लहलेंदबा

बघेलखंडी लोक कलारूपो में पहेलियो का बहुत महत्व है इन्हें हम निम्न भिन्न रूपों में देख सकते हैं

१.प्रकृति संबंधी पहेलियाँ
२.खेती संबंधी पहेलियाँ
३.नैतिक जीवन शैली सम्बंधित पहेलियाँ
४.संस्कारों संबंधी पहेलियाँ

बघेलखंड में मन्त्र गीतों की परम्परा सामान्य जनजीवन के सहज प्रयोग में तो नहीं हैं परन्तु कुछ ओझाओं से जो हमे मन्त्र सुनने को मिले वो निम्नवत हैं –

१.सांप के मन्त्र
२.बिच्छू के मन्त्र
३.भूत –प्रेतों के मन्त्र
४.ज़िन्द के मन्त्र
५. बलि के मन्त्र
६.विभिन्न रोगों के झाड़ने के मन्त्र
७.पशु रोग मन्त्र
८.स्थानीय देवताओं के सुमिरनी मन्त्र
९.कुल्हाचरन मन्त्र
१०. अन्य विषाक्त जानवरों के झाड़ने के मन्त्र

लिखित लोक साहित्य -: साहित्य की विविधि विधाओं में से कविता में भी लोकसाहित्य का स्वरूप सरलता से देखा जा सकता है |कविता लोकमानस और लोकजीवन में गहरा सम्बन्ध स्थापित किये हुए है | आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के शब्दों में –"साहित्य का अत्यंत महत्वपूर्ण भाव लोकसाहित्य पर आधारित है |"बघेलखंड में पूर्व से अब तक लगातार लोकसाहित्य लिखा जा रहा है जिसकी मूल भाषा बघेली ही है | लिखित साहित्य के तारतम्य में हम कुछ बघेली कवियों एवं पूर्व के बघेली साहित्य की बात रख रहे हैं जो निम्नप्रकार है-

लोक कवि बैजू 'काकू'
मधुर अली
गणेश भट्ट
श्यामसुंदर शुक्ल
हरिदास कवि
श्री शम्भू 'काकू'
नागेन्द्र प्रसाद शर्मा
गुलाम गौश खां
कालिका प्रासाद त्रिपाठी
सुदामा प्रासाद मिश्र
बाबूलाल दहिया
शिवशंकर मिश्र 'सरस'
सनत कुमार सिंह
धीरेन्द्र त्रिपाठी
रामलखन शर्मा
शैफूद्दीन सिद्दीकी 'सैफू'

रामदास पयासी

भागवत प्रसाद पाठक

गोमती प्रसाद ' विकल '

राम लखन सिंह बघेल "महगना"

बघेलखंड के सम्पूर्ण क्षेत्र के ये बघेली कवि हैं जिन्होंने सार्थक रचनाये कर बघेलखंड को बघेली भाषा को नए आयाम दिए भाषा को नई दिशा प्रदान की | बघेली भाषा के लिखित साहित्य में १०वी शताब्दी के काल से भी यंहा के राजवंशो से रचनाये होनी शुरू हो गयी थी जिनमे प्रमुख राजाओं के नाम हम लिख रहे है –

महाराजा विक्रमादित्य सिंह

महाराजा रघुराज सिंह

महाराजा विश्वनाथ सिंह

महाराजा मार्तंड सिंह

राजा राव बैरीशाल आदि |

बघेली बोली -: बघेली बोली भी अन्य बोलियों के सामान हिन्दी से ही मिश्रित है | इस अंचल कि हिन्दी को भी पूर्वी हिन्दी कहा जाता है |अतः पूर्वी हिन्दी से एक समान जो बोलिया निकली उनमे प्रथम अवधी फिर बघेली और छत्तीसगढ़ी है | डाक्टर उदय नारायण तिवारी अवधी और बघेली में नाम मात्र का अंतर मानते हैं –भाषा संबंधी विशेषताओं की दृष्टी से अवधी तथा बघेली में नाम मात्र का अंतर है | अतएव अवधी से अलग बोली के रूप में इसे स्वीकारने की आवश्यकता न थी | डाक्टर ग्रियर्सन का अनुसार –"पूर्वी हिन्दी की अन्य बोलियों की भाँती बघेली की भी उत्पत्ति अर्धमागधी से हुई है | बाबू श्याम सुन्दर दास तथा उदय नारायण तिवारी ने भी ग्रियर्सन की बात का समर्थन किया है | किन्तु बाबूराम सक्सेना ने अपने मत का समर्थन करते हुए लिखा है कि –"पूर्वी हिन्दी जैन अर्धमागधी की आपेक्षा पाली के अधिक निकट है |"डाक्टर सक्सेना के मत का खंडन करते हुए त्रिलोकी नारायण दीक्षित ने कहा है की –"सक्सेना का मत स्पष्ट नहीं है | उनका यह अनुमान हैं की अवधी जैन मागधी से नही वरन उसके पूर्व किसी अर्धमागधी से उत्पन्न हुई है |"इस प्रकार अवधी और बघेली में नाम मात्र का अंतर है बघेली को अवधी से अलग करने की आवश्यकता नहीं है |अवधी के अंतर्गत तीन प्रमुख बोलियाँ हैं अवधी ,बघेली,और छत्तीसगढ़ी अवधी और बघेली में कोई अंतर नहीं है बघेलखंड में बोले जाने के कारण इसका नाम बघेली पडा | कतिपय विद्वान् लेखको ने अवधी और बघेली में अंतर स्पष्ट करते हुए लिखा है जिसमे ग्रियर्सन का मत दृष्ट्व्य है –

१.बघेली में अतीत काल की 'करिया ते' अथवा तैं प्रयुक्त किया जाता है जबकी अवधी में इसका अभाव है |

२. अवधी में मध्यम पुरुष तथा भविष्यत् काल के रूप 'ब' संयुक्त करके सम्पन्न होते जबकि बघेली में 'ह 'जोड़कर बनाए जाते है | यथा अवधी देखीलों तो बघेली देखिहौं |

३.अवधी 'व' तथा बघेली 'ब' में परिणित हो जाता है |यथा –अवधी आवाज बघेली अबाज अवधी आवा बघेली आबा |

बघेली में और कई एक अंतर अवधी से भिन्न दिखाई देते हैं |सर्वनाम में यह लगभग हिन्दी का अनुसरण तो करती है परन्तु अवधी का नहीं |सर्वनाम आदि की आवश्यकता पर अवधी में एक पूर्ण शब्द तुम ,उन या उनखर से बोध होता है,परन्तु वंही बघेली में प्रायः पांच शब्द का प्रयोग किया जाता है जैसे –तूपांच ,उनपंचे, तथा ओनखर पंचेन के आदि |हिन्दी में भाई लोग शब्द का प्रयोग होता है जैसे –तुमलोग ,उनलोगों का आदि | इसी तरह एकवचन हो दो वचन हो या बहुवचन हो सभी क्रियायो में अंतर दिखाई देता है |अवधी में जंहा अहै – बातें की टेक लगा के बोलते हैं तो वही बघेली में एँ और ई लगाकर काम चला लिया जाता है |भूतकाल की क्रिया में भी अवधी में कहे रहों, कहे रहें आदि का प्रयोग होता है जबकी बघेली में एकवचन हेतु कहे रहया तथा कहे रहे का प्रयोग होता है | विशेषण बनाने में भी बघेली में हा का प्रयोग कर विशेषण में बदल दिया जाता है यथा-ससुररिहा,पानी से पनिहा,बेटऊ से बेटउहा, नीक से निकहा, भूक से भूकहा, पियास से पिअसहा आदि |कार्य किन समाप्ति पर बघेली में चुकेन शब्द का प्रयोग होता है जैसे की हिन्दी में लिए शब्द लगता है –कहा लिए ,पहन लिए,उसी प्रकार बघेली में खाय लिहेन ,पहिन लिहेन आदि शब्द हैं | किसी के प्रति सम्मान व्यक्त करने के लिए हुकुम या मर्जी बोलकर आज्ञा सूचक जन वाक्य का प्रयोग होता है जैसे-हुकुम होय तो जइ बिलकुल उसी तरह हिन्दी में- हुकुम हो तो जाए उसी प्रकार बघेली का इहां ,उंहा ,जंहा ,तंहा और हिन्दी का यंहा वंहा , जंहा-तंहा आदि | तो इन सब उदाहरणों से यह सिध्ध होता है की अवधी से कंही भिन्न बघेली का अपना आस्तित्व है | गौर करे यदि यह अवधी के इतने नज़दीक होकर उससे भिन्न है तो अन्य बोलियों से भिन्न तो होगी ही | इस प्रकार हम बघेली को एक अलग बोली के रूप में विश्लेशण करने पर देखते हैं |

प्रस्तावित योजना वाले क्षेत्र की भाषा 'बघेली' है जो पूर्वी हिन्दी की प्रमुख बोली है | बघेली बोली बोलने वालो का क्षेत्र दो भागो मे बंटा है एक तो विशुद्ध बघेली और दूसरी गोंडी बघेली इसी आधार पर यंहा पाए जाने वाले कलारूपों को भी दो भागों मे बांटा गया है | एक हिंदवानी परंपरा और दूसरी आदिवासी परंपरा के नाम से विख्यात है | बघेली भाषा का क्षेत्र सम्पूर्ण बघेलखण्ड के साथ –साथ मिर्जापुर ,मंडला ,बाला.घाट बांदा तथा छत्तीसगढ़ का बिलासपुर तक का कुछ भाग भी शामिल है | बघेली भाषा 13 वी सताब्दी के आस - पास से अपने अस्तित्व में आई है | इसे बघेलखंडी , रिमारी तथा रिवाई के नाम से भी जाना जाता है | बघेलखण्ड मे विभिन्न जातियों के लोग रहते हैं | इन जातियों के संस्कारों रीति – रिवाजों और रूढ़ियों मे बहुत अंतर है इसलिए यही कारण रहा है कि यंहा जातिगत लोक साहित्य ज़्यादा मिलता है यहाँ की

कुछ प्रमुख कोहरौंही गाथा गायकों के साक्षात्कार -:

शोध कार्य के दौरान बघेलखंड क्षेत्र के विभिन्न ग्रामो में निवासरत कोहरौंही समुदाय के प्रतिनिधि कलाकारों से इस गाथा गायन परम्परा के सम्बन्ध में जो चर्चाएं हुई ,जो नए तथ्य सामने आये मै उसे मै निम्नवत प्रस्तुत कर रहा हूँ –

1. संभुनाथ कुम्हार - सम्भूनाथ जी सीधी जिले के अमरपुर ग्राम के निवासी है | ये कोहरौंही गायन के प्रतिष्ठित और लोकमान्य कलाकार हैं | शोध कार्य के दौरान नरेंद्र बहादुर सिंह की जो इनसे बातचीत हुई उस चर्चा का अंश निम्नवत है-

सवाल- आप का नाम बताएं ? आप किस ग्राम के निवासी हैं ?

ज़वाब- मेरा नाम सम्भूनाथ कुम्हार है |और मै अमरपुर ग्राम का निवासी हूँ |

सवाल-आप की यह गायन परम्परा कब से है ? और इस गायन परम्परा का गायन आप कब से कर रहे हैं ?

ज़वाब-यह गायन परम्परा मेरे ज्ञान में मेरे दादा पुरखो से यानी करीब 200 वर्षो से चली आ रही है |और मै इस गायन परम्परा को पिछले ४० वर्षो से कर रहा हूँ |

सवाल-जिस गायन परम्परा के आप संवाहक है उसे कोहरौंही क्यों कहते हैं ? क्या आप का नाम आप की गायन परम्परा के नाम पर है या आप के जातीय नाम पर आप की गायन परम्परा ?
ज़वाब-हम कुम्भज ऋषि के वंशज हैं इसलिए हमे कुम्हार हैं | जातीय नाम पर हमारी कला का नाम कोहरौंही पडा है | हम कोहरौंही शैली में बहुत सारी लोक कथाओं का गायन करते हैं,और सारी गाथाये कोहरौंही गाथा के नाम से ही जानी जाती है |
सवाल-कपड़ा कैसा पहनते हैं और क्यों?
ज़वाब-हम लोग धोती और बंडी कपड़ा पहनते हैं क्योकि हमारे पूर्वज और बादवासी ऐसा ही कपड़ा पहनते थे | और हम तो किसान है इसलिए हमारा कपड़ा ऐसा ही रहता है |
सवाल- शिव विवाह को आप लोग अपनी पहली गाथा मानते हैं ? आप की गायन परम्परा में शिवविवाह या शिव की कथा ही पहले क्यों शुरू की गयी ?
जावाब- शिव विवाह गाथा हमारी पहली गाथा गायन परम्परा है | ऐसा नही है की हम शिव विवाह ही गाते हैं मुख्य हमारी भजन गायकी है जिसमे हम पचरा की गायकी भी करते हैं जो दर्शको को एक तरह के कार्यक्रम से तोडती है और एक उन्माद पैदा होता है |
सवाल-आप की सुमिरनी में राम नाम ही क्यों कहते हैं ?
ज़वाब- राम हमारे भगवान हैं और हम हिन्दू धर्म के हैं ,हिन्दू धर्म के सबसे बड़े देवता राम हैं | उन्हें सब जानते है | (दूसरे शब्दों में उनके ज़वाब को समझे तो राम लोक नायक हैं इस कारण वो आनायास ही कथा के सुमिरनी में आये और परम्परागत हो गए |)
सवाल- आपको कभी ऐसा कुछ लगा की आप की गाथा से समाज को क्या मिलता होगा ? क्यों कि आप जो श्रवण गाथा सुनाते हैं वह बड़ा मार्मिक है |
ज़वाब- हमारी गाथा गायन से समाज को असर होता था तभी तो घर का बँटवारा नहीं होता था | माँ-बाप को बच्चे सम्मान देते थे | आज कल का ज़माना तो देख ही रहे हैं की मेहरी आते ही माँ बाप को आश्रम (वृद्धाश्रम) भेज देते है |
सवाल-पहले आप की जाति घर चलाने के लिए क्या रोज़गार करती थी ?
ज़वाब-मिट्टी के बर्तन बनाना हमारा हमेशा से रोज़गार रहा है लेकिन अब ज़माना बदल गया है इस कारण काम **नहीं चलता** |
सवाल-अब आप लोग पहले की तरह अपनी परम्परा का प्रदर्शन क्यों नहीं करते ?
ज़वाब-न अब वो समाज रहा और न ही वो लोग जो गायकी किनकी कद्र करते थे | देखिये सम्मान सबको प्यारा है चाहे वह गरीब हो या अमीर तो हम क्यों अपना सम्मान गँवाए | दूसरा काम कर लेंगे एसा हमारे बच्चे सोचते हैं इस कारण अब वो लोग इस गायन को गाते ही नहीं और हम लोग जो गाते हैं तो अपने समाज के बीच | अब धीरे- धीरे परम्पराओं के लिए आप जैसे लोग कार्य कर रहे हैं तो लगता है की एक बार फिर आनंद आयेगा |
2. रिपुसूदन कुम्हार - आपकी नरेंद्र बहादुर सिंह जी से जो कोहरौंही गाथा गायन शैली ,परम्परा ,सांस्कृतिक चेतना को लेकर जो बाते हुई वो जस की तस प्रस्तुत है |
सवाल- जय राम जी कक्का,आपका नाम और आप कंहा से हैं आपके गाँव का नाम बताइये ?
ज़वाब- मेरा नाम रिपुसूदन है और मै अमरपुर का हूँ |
सवाल- आप यह गाथा गायन कितने वर्षो से कर रहे हैं ?
ज़वाब- लाल साहब देखिये , वैसे यह गाथा गायन तो हम ३० साल से कर रहे हैं लेकिन हमने इसे अपने बाबू से सुना था और बाबू बताया करते थे की इसे हमने अपने दादा से सुना था तो अब बताइए की कितने

साल हुए होंगे लगभग २५० साल पुरानी है हमारी यह परम्परा ,जिसका हम लोग आपके सामने समक्ष प्रस्तुत कर रहे हैं |

सवाल- आप की गायन शैली को क्या आपके बच्चे लोग सीख रहे हैं ?

ज़वाब- नही अब इस गायन परम्परा को सीखने के लिए नये लोगो में उत्साह नही है | पहले हम लोग इसे गाकर ही अपना भरण-पोषण करते रहे हैं लेकिन अब न तो कोई सुनता है और न ही उतना सम्मान देते हैं तो यही कारण कोई सीख भी नही रहा | किसलिए सीखेंगे इसे सीख कर क्या करेंगे ऐसा हमारे बच्चे लोग पूंछते हैं |

सवाल- चाचा कोई गीत सुनाइये कोहरौंही का |

ज़वाब- अच्छा, श्रवण गाथा सुनाये तो लीजिये ...(श्रवण गाथा गायकी)

सवाल- और कोई दूसरा गीत पचरा सुनाइये |

ज़वाब- ओसरा से निकरय दुअरबा मा ठुनकय
कहय नहीं हो जाबय न
बिन पइरी गमनबा नहीं हो जाबय न
हुक्का फोरय चिलम दय मारय
लतबउ चारि भतारेउ का मारय
ओनखर दिदबा देखा न
धरइबा नइहर कय डगरिया ओनखर दिदबा देखा न

सवाल- यदि सरकार इस परम्परा को बचाने के लिए कोई उपाय करे तो क्या आप लोग नई पीढी को सिखायेंगे |

ज़वाब- सरकार अगर मुफ्त मे करायेगी तो करके क्या करेंगे जब पेट चले तो सीखेंगे और सिखायेंगे भी |

सवाल-कोहरौंही गाथा जो आप लोग गाते हैं क्या उससे आप लोगो का कुछ आर्थिक सहयोग होता है?

ज़वाब- होता था जब तब हम लोग गाँव-गाँव जाकर किया करते थे और अब नहीं होता इसी कारण कुम्हार गायक कम हो रहे हैं |

सवाल-मटका वादन क्या आपकी जातिगत परम्परा रही है ?

ज़वाब- हाँ, हमारा मुख्य वाद्य मटका और खड़ताल ही है |

सवाल- तो फिर आप लोग अब मटका बजा के क्यों नहीं गाते हैं ?

ज़वाब- बड़ी मेहनत लगती है मटका बजाने में जब इस परम्परा के गायन वादन वाले लोग कम होने लगे तो मटका कौन बजाये ढोलक और खंजनी डफली से काम चल जाता है | पर अब हम परम्परागत रूप से अपनी कला का प्रदर्शन करेंगे और मटका बनायेंगे उसे प्रदर्शन के दौरान बजायेंगे और नयी पीढी को सिखायेंगे भी |

सवाल- यदि सरकार ने कुछ नहीं किया तो क्या आप लोग अपनी परम्परा के लिए कुछ काम नहीं करेंगे? उसे नहीं सुनायेंगे लोगो को यही परम्परा तो आपका आस्तित्व है ?

ज़वाब-हम करेंगे लेकिन हमारे बच्चे नही कर पायेंगे | हमारा तो किसी तरह बीत गया लेकिन उनका नहीं बीतेगा हम लोग मरेंगे तो यह परम्परा भी मर जायेगी ऐसा सोचते थे पहले हम लेकिन अब हमारी कोशिश इसे सुचारू रखने की दिशा में रहेगी |

3. राम सहोदर कुम्हार – कोहरौंही गाथा गायन शैली में तमाम लोक नायको की कथा को गाकर सुनाने की परम्परा रही है इसी तारतम्य में नरेंद्र बहादुर सिंह और रामकृपाल बासदेव की जो परिचर्चा हुई तो निम्नवत हैं-

सवाल- आप का नाम ?
ज़वाब- राम सहोदर कुम्हार
सवाल- आपकी उम्र क्या है ?
ज़वाब- ४५ वर्ष
सवाल- आप के गाँव का क्या नाम है ?
ज़वाब-बंदइला
सवाल-आप यह गाथा गायन कब से कर रहे हैं ?
ज़वाब-मुझे यह गाथा गाते हुए लगभग २० साल हो गये |
सवाल-इस गाथा गायन के लोग क्या-क्या कथा सुनाते हैं ?
ज़वाब- श्रवण कुमार, हरिश्चन्द्र, शिव विवाह, रामकथा, कृष्ण कथा, पितमा, बिरहा,बनजोरबा और कबीर के भजन |
सवाल-क्या अब आप के बच्चे इस गाथा गायन को गाते हैं ?
ज़वाब-नही,वो अब नहीं करते उन्हें शर्म आतीहै | लेकिन जब से आप लोग आये हैं तब से लग रहा है की अपनी परम्परा के संरक्षण के लिए कार्य करना चाहिए और अब तो बच्चे भी रूचि दिखाने लगे हैं |
सवाल- कुम्हार जाति में गोत्र की परम्परा क्या है ?
ज़वाब- हम लोग काशी गोत्र कनौजिया वाले कुम्हार हैं और हमारे गोत्र में तीन कूरे हैं जिनमे हम विवाह व रिश्ते कर सकते हैं जैसे की हम कनौजिया, बर्दिया और गधहेला में एक-दुसरे से रिश्ता कर सकते हैं |
सवाल-यदि इस कला से आप लोगो को रोज़गार मिला तो क्या आप लोग इस परम्परा के लिए गायन करते रहेंगे?
ज़वाब-जी बिलकुल करेंगे ,क्यों की हमे जीवन यापन ही तो करना है | और आदमी जीता किसके लिए है ? एक तो धन दूसरा सम्मान | दोनों मिलेगा तो हम क्यों नहीं करेंगे
सवाल- आप कोहरौंही गायन शैली में गाई जाने वाली कोई कथा या गीत सुनाइये ?
ज़वाब- अच्छा, " राजा इहउ हो महिनबा बीता जाय हो, कंधइया छाये मधुबन मा
शीतल चन्दन अंग मा रगडत, कामिनी करत श्रृंगार हो
इतना श्रृंगरबा तू उआ दिन करतिउ, सुखबा सोमनउ के मसबा अषाढ़
साबन अउर सील है नीरा, बड-बड बूंदन परत शरीरा
पहिरत कुसुम उतारत क्षीरा, पपिहरा बोलत पिउ बन मोरा
राजा इहउ हो महिनबा बीता जाय हो, कंधइया छाये मधुबन मा
लागि गएँ भादउ कइ मासा, गरजय अउर घहराय हो
बिजुरी चमकय मोर जिउ डरपय राजा केकरे सरनिया चली जाऊं हो"

बघेलखंड से बाहर हम लोग जाते हैं तो बड़ा सम्मान करते हैं ,और हमारा गीत सुनने को भीड़ लगती है | अभी कुछ दिन पहले सीधी लोकरंग परिवार के सहयोग से हम बाहर कार्यक्रम करने गए थे तो लोगो ने खूब सम्मान दिया और हमारे गायकी की सराहना की |

4. रामसागर कुम्हार-

सवाल- आप का नाम ?
ज़वाब- राम सागर कुम्हार
सवाल- आपकी उम्र क्या है ?
ज़वाब- 56 वर्ष
सवाल- आप के गाँव का क्या नाम है ?

ज़वाब-अमरपुर

सवाल-आप यह गाथा गायन कब से कर रहे हैं ?

ज़वाब-मुझे यह गाथा गाते हुए लगभग ३० साल हो गये |

सवाल-इस गाथा गायन के लोग क्या-क्या कथा सुनाते हैं ?

ज़वाब- श्रवण कुमार, हरिश्चन्द्र, शिव विवाह, रामकथा, कृष्ण कथा, पितमा, बिरहा,बनजोरबा और कबीर के भजन |

सवाल-क्या अब आप के बच्चे इस गाथा गायन को गाते हैं ?

ज़वाब-हाँ, कुछ लड़के सीख रहे हैं जिनपर पूरा विष्वास है की वो हामारी परम्परा को आगे की पीढियों तक ले जायेंगे और यह गाथा गायकी बची रहेगी |

सवाल- आप कुम्हार हैं , आप मिटटी का कार्य भी करते हैं कुछ बताइए की मिट्टी के बर्तन का निर्माण आप कैसे करते हैं ?

ज़वाब-मिटटी का बर्तन बनाने के लिए सबसे पहले तो अच्छी मिट्टी होनी अति अवाश्यक है |फिर दुसरे काम शुरू होते है कैसे बनाते हैं मै आपको बता दूं चाक चलाने की डंडी चकरेटी कहलाती है तथा यह चाक से जिस गड्ढे में फंसाई जाती है उसे गुलबी कहा जाता है | गुलबी का स्थान चाक पर कंहा हो यह इस पर निर्भर करता है की उस चाक पर कितनी बड़ी चीज़ बनायी जानी है | बड़े बर्तन बनाने के लिए गुलबी का चाक के केंद्र से दूर होना आवश्यक हैं नहीं तो बर्तन गुलबी के ऊपर तक जाएगा और चाक घुमाना मुश्किल होगा | कीला एक पत्थर के छोटे चाक में फंसाकर ज़मीन में गाडा जाता है | उस पत्थर को पाही कहते हैं , और खूंटे को कीला कहते हैं | यह केर की लकड़ी का बनाया जाता है | कीला अपने ऊपर चाक को इस तरह धारण किये रहता हैं जिस तरह भगवान ने उंगली पर गोबर्धन पर्वत को धारण कर लिया था | केर का वृक्ष खैर जाति का है परन्तु यह पुरुष वृक्ष माना जाता है इसकी खासियत यह होती है की इसकी लकड़ी घिसती या कटती कम है इसलिए ज्यादा दिन काम देता है | कीला की ऊँचाई दो से तीन उंगल ऊंची रखी जाती है ज्यादा ऊँचाई से चक तेज़ घुमाते समय कीले से बहार निकल जाने का भय रहता है | साथ ही बंद होने पर पैरो पर गिरने का दर भी रहता है | क्योंकि नीचा होने पर चक झुकने पर जल्द ही ज़मीन पर आ जाता है | कीला चाक के जिस गड्ढे पर फिट होता है उसे गुलबी कहते हैं इस स्थान पर थोड़ा तेल लगाया जाता है ताकि चिकनाई से चाक आसानी से घूमे | बर्तन काटने के लिए उपयोग किया जाने वाला धागा छेन कहा जाता है | कुम्हार इसे बहुत सिद्ध बस्तु मानते हैं | कुम्हार अपना छेन किसी अन्य जाति के लोग को नहीं देते यह बड़ी पुरानी परम्परा है इसे अपसगुन माना जता है | समझदार कुम्हार आपस में भी एक दूसरे का छेना लेते मांगते नहीं हैं | चाक पत्थर का बनता है, काले पत्थर का चाक नहीं बनता | पत्थर वो अच्छा माना जाता है जो खान्नाटेदार होता है | चाक ज़्यादा देर ताव में रहे इसलिए उसकी निचली सतह पर दो स्तर घर बनाए जाते हैं छोटे ढाई फुट के चाक को चकुलिया कहते हैं | तीन फुट और उससे बड़े चाक , चाक कहे जाते हैं | आज कल पैर से चालाने वाले और बिजली के मोटर से चलने वाले चाक भी बन गए हैं पर पैर से बनाने वाले चाक व्यवसायिक कुम्हारों के लिए बेकार हैं क्योंकि वो तुरंत ढीले पड जाते हैं | हाथ से घुमाए जाने वाले चाक पर अधिकतर कुम्हार दक्ष होते हैं | क्योंकि वो चाक की गीत के अनुसार काम करते हैं | जैसे पहले चाक बहुत तेज़ घूमता है उस समय मिट्टी को उठाना और उसे फाड़ना आसान होता है परन्तु वह बाद में कुछ सुस्त हो जाता है उस समय गीले बर्तन को अंतिम आकार देकर चाक से उतार लेना आसान होता है | यदि चाक निरंतर तेज़ घूमता रहे तो बर्तन उतारा नहीं जा सकता यही कारण है की बिजली के चाक में तीन गियर होते है और काम करते समय गियर बदलकर चाक की गति नियंत्रित करनी पड़ती है | कुम्हारों के लिए बिजली का चाक ज़्यादा उपयोगी नहीं होता क्योंकि एक तो यह बड़ा छोटा होता और दूसरा बिजली न हो तो काम ही न हो पायेगा | चाक पर काम

करते समय जिस बर्तन में पानी रखा जाता है ऐसा कहा जाता है की कुम्हारों को यह कुंडी भगवान् शंकर ने दी थी | यह वही कुंडी हैं जिसमें महादेव अपनी भांग गलाते हैं | इसमें रखा पानी सभी प्रकार के जलो से सुद्ध माना जाता है | बर्तन की ठुकाई के लिए प्रयुक्त किये जाने वाले औज़ार थापा और पिंडी कहलाते हैं | थापा लकड़ी से बनता है और पिंडी पत्थर की| पत्थर कोण चिकना होना बहुत आवश्यक है |

सवाल- आप कोहरौंही गायन शैली में गाई जाने वाली कोई कथा या गीत सुनाइये ?

ज़वाब- मै आपको चिहुरी सुनाता हूँ –

एक पेड़ तर सुता कंधइया मुख तर मुरली दबा कर के
आय गयीं रस गढ़ कय सखियाँ लय गयीं मुरली चुरा कर के
कुछु हेरयं कुछु रोबयं कंधइया कुदत कुदत घर जा करके
घरबा रहीं हाँ माता जशोदा गोंदिया लेत छुपा करके
आने दिन लाला बिंहसैट आमा आजू काहे मनबा मलिन है जी
धंउ कांधा तय खेती चराया धंउ बन बिगड़ी गाय रहीं
न माता हम खेती चारायन न बन बिगड़ी गाय रही
एक पेड़ तर सुते रहन हम मुख तर मुरली दबा कर के
आय गयीं रस गढ़ कय सखियाँ लय गयीं मुरली दबा कर के
बांस के बंसिया जाय देब लाला सोनबा देब गढ़ाय रही
बांस के बंसी न छोड़ब माया हीरा रतन जड़ाय रही
बांस कय बंसी हम फूँकत रहन ता सोरा सय गइया मोहाय रहीं
अरे बंसबा केर बंसिया न देबउबा माता ता छोड़ब गोकुल ससुरारि
तब लय के बंसिया भाग कंधइया अइसन बालापन मा
तब गेंदबा खेलय जमुन जी के तीर ||"

सवाल- कुम्हार जाति के लोग यानी आप लोग कौन- कौन से मिट्टी के बर्तन बानाते हैं थोड़ा इस सम्बन्ध में भी बताइए ?

ज़वाब- कुम्भकार जाति के जातीय शिल्पकारिता की बात करे तो यह जाति मिट्टी के तामाम दैनिक उपयोगी वस्तुओं का निर्माण पारम्परिक रूप से करती आ रही है जिनके बघेली नाम इसप्रकार हैं –गगरी, चुकबा, दोहनी, दिया, बरायन, कूडी, तरछी, मेटा, नादि, पुरबा, पुरई, नदोला, सुराही, कुल्हर, कलशा, पैंना, खप्पड़, तेलाई(भोजन बनाने का सामान), कुंडरा, पंचकुंडरी, खपड़ा, नरिया, चिलम, झूमर, हंडी, चरुई, कराही, गगरा, गमला, औंधा, कुठुली, ढोढरी, करछुली , मदाइन, बाल्टी, थुकनी, गोरसी,विभिन्न तरह के खिलौने व मूर्तियाँ |

सवाल- ये बाताइये की यदि आप को सरकार की तरफ से कोई सहयोग न मिला यानी की अनुदान मिला तब भी आप अपनी परम्परा संस्कृति व कालारूपों के लिए कार्य करेंगे उन्हें जीवित रखने का प्रयास करेंगे

जवाब- जी कर ही रहे हैं | क्या अब तक हम लोगों को सरकार गाने-बजाने के लिए पैसा दिया करती थी ? हाँ ये बात और है कि रोज़गार के चक्कर में लोग अपनी परम्परा को भूल रहे हैं और यह कोई रोक नही नहीं सकता क्योंकि समय बड़ा व्यस्त होता जा रहा है | जीवन की इस भागा- दौड़ी में कंहा फुर्सत है की पारम्परिक कला रूपों की ओर ध्यान दें | वो समाज तो अब वापस नहीं आयेगा हाँ नया समाज हम निर्मित करे जिसमे परम्पराओं और कलारूपों की अहम् भूमिका हो |

सवाल- आज पूरे देश की तामाम जातियां अपने कलारूपों के संरक्षण के लिए आगे आ रही है ऐसे में आप को क्या लगता है की क्या करना चाहिए ?

ज़वाब- हम भी अपनी जातीय संस्कृति के लिए कार्य करेंगे लेकिन उसे जातीय स्तर तक सीमितन रखेंगे क्योंकि कला वैश्विक होती है न की जातिगत | हम लोग अपने गाँव वालो के लिए ही इस कला का प्रदर्शन किया करते थे हर जाति के समक्ष और हम लोग तो यह भी कहते हैं की ये सब लोग हमारी कला के संरक्षण के लिए आगे आयेंगे |

5. मनफेर प्रजापति- नरेंद्र सिंह बघेल की मनफेर प्रजापति की हुई बातचीत के कुछ अंश –

सवाल- काका, आप का नाम क्या है ?

ज़वाब- मेरा नाम है मनफेर प्रजापति |

सवाल- काका आपकी उम्र क्या होगी ?

ज़वाब- मेरी उम्र 55 साल है |

सवाल- आप यह बर्तन बनाने और कुम्हार जाति के जातीय गाथा गायकी का कब से कर रहे हैं ?

ज़वाब- लगभग यही कोई ३५ साल हो गए मुझे मिट्टी का काम करते हुए |

सवाल- काका यह बताइये की बर्तन पहले ज़्यादा बिकते थे की अब ?

ज़वाब- बर्तनों की मांग तो अब ज़्यादा बढी है, कारण यह भी है की बहुत लोग अब बनाने वाले बचे नहीं फिर भी कुछ दैनिक उपयोग की चीज़े आज भी हैं जो सबको लेनी पड़ती है | उसके उपयोग के बिना काम अधूरे माने जाने जाते हैं | तो लोग खरीदते ही हैं | हमारी सबसे बड़ी समस्या मिट्टी है, मिट्टी नहीं मिलती अब ठीक-ठीक और जंहा है भी तो जिसका खेत है वो निकालने नहीं देते | तो क्या करें इसलिए हम लोग फिर पैसा देके मिट्टी भी खरीदते है | ऐसे- तैसे करके हमारे लिए बचता कुछ नहीं लेकिन घर में हैं तो क्या करे कुछ न कुछ तो करना ही पडेगा न पेट के लिए | लेकिन अब आज के बच्चे या नहीं कर रहे वो बाहर कमाने–धमाने चले जाते हैं हमी बूढ़े जो गाँव में हैं वही लोग करते हैंऔर किसी तरह गाँव समाज का काम चला रहाहै| |

सवाल- मिट्टी के बर्तन बनाने की विधि के बारे में थोड़ा बताइये ?

ज़वाब- मिट्टी का बर्तन बनाना बड़ा कठिन काम हो गया आजकल | एक तो सही माटी नहीं मिलती और माटी मिल भी गयी तो जिस कोदो के भूसे की आवश्यकता होती है वह मिलना बड़ा मुश्किल हो रहा है | अब क्या बताये बनाने के बारे में पहले तो माटी को आते की तरह मांडना पड़ता है फिर चाक पर बर्तन बनाइये | चाक पर बर्तन बनाना सरल है असली मेहनतका काम है चाक से उतरने के बाद जब बर्तन को बढ़ाना होता है उसे अंतिम रूप देना होता है | और इससे में सारी कलाकारी दिख जाती है क्यों कि-

" गुरु कुम्हार शिष्य कुम्भ है गढ़-गढ़ काढ़े खोट
अन्दर हाथ सहार के बहार मारे चोट "

तो जिस तरह गुरु को शिष्य को संस्कारी, समाजी और काम-काजी बनाने के लिए मेहनत करनी पड़ती है ठीक उसी तरह कुम्हार का काम भी है | कुम्हार ब्रम्हा की तरह अपनी रचना में कोई कमी नहीं छोड़ना चाहता ये बात और है लोग उसकी इस मेहनत को कौड़ियों के भाव खरीदें |

सवाल- बर्तन को अंतिम रूप देने के दौरान जिस औज़ार का उपयोग कर रहे हैं उसे क्या कहते हैं ?

ज़वाब- एक का नाम थापा है और दुसरे को पीडी कहते हैं, और जिस अर्धपूरित बर्तन रखे गए हैं उसे मन्ना कहते हैं |

सवाल- जैसे की आप लोग मिट्टी का बर्तन बनाते हैं तो क्या आपके आनी वाली पीढ़ियों या बच्चे लोग भी सीख रहे हैं ?

ज़वाब- ज्यादातर नहीं, लेकिन कुछ लोगों का आज भी इस पर भरोषा है वो बाहर जाकर कमाने से बेहतर इसी को मानते हैं |

सवाल- अगर सरकार आपके इस व्यवसाय या आ[पकी जातीय शिल्पकारिता और कलाओं के संरक्षण की दिशा में कोई बेहतर कदम उठाये तो आप लोग इसका समर्थन करेंगे या पुनः अपनी पारम्परिक शिल्पकारिता के लिए कार्य करेंगे ?

ज़वाब- जी बिलकुल करेंगे, और कर ही रहे हैं|

सवाल- मिटटी के बर्तन की खासियत क्या है थोड़ा प्रकाश डालिए ?

ज़वाब- एक दो खासियत हो तो बताएं, अब कितनी खासियत बताएं जितने बर्तन उतनी उनकी विशेषता अब जैसे कलश या दोहनी की ही बात करे तो इसमें दूध पकाना एक तो स्वास्थ्य के लिए लाभप्रद है दूसरा इसमें गोरस ठीक तरह पकता है और मलाई भी ठीक तरह बनती है | मिटटी के बर्तन शुद्ध और पर्यावरण की दृष्टि से बहुत बहुत उपयोगी हैं| हमारी सरकार को चाहिए की इनकी ज़्यादा उपयोगिता की ओर ध्यान दे और प्रकृति तथा पर्यावरण को प्रदूषण मुक्त होने से बचाए | यही बर्तन ही एक ऐसे बर्तन है जो माटी को माटी से जोड़ते हैं |

6.गणपति प्रजापति- नरेंद्र बहादुर सिंह की गणपति कुम्हार से कोंहरौंही गाथा गायन के संबंध में हुई बातचीत के कुछ अंश-

सवाल- आप का नाम क्या है ?

ज़वाब- मेरा नाम गणपति प्रजापति है|

सवाल- आपकी उम्र क्या है और आप यह पारम्परिक शिल्पकारिता यानी मिट्टी के बर्तन बनाने का कार्य कब से कर रहे हैं ?

ज़वाब- मेरी उम्र इस समय ६१ के आस-पास है और मै पिछले ४० सालों से मिट्टी के बर्तन बनाने का कार्य कर रहा हूँ|

सवाल- आप मिट्टी का बर्तन बनाते हैं इसमें आपको अपना और घर का जीवन यापन करने के लिए आमदनी हो जाती है ?

ज़वाब- उतनी आमदनी तो नहीं हो पाती काहे की अब वो जमाना नहीं रहा की मिट्टी के बर्तन काफी मात्रा में घरो में उपयोग आते हों| अब तो मिट्टी के बर्तनों की जगह अन्य बर्तनों ने ले ली है| लेकिन अब भी मिट्टी के बर्तन पारम्परिक रूप से उपयोग में होते है जिसका व्यवसाय पूरे वर्ष नहीं चलता उसका अपना विशेष मौसम है|

सवाल- आपकी जाति के लोग पारम्परिक रूप से गाथाओं की बहुत सुन्दर गायकी करते हैं जिसे कोहरौंही कहा जाता है उसे आप भी गाते होंगे न ?

ज़वाब- हमारी जाति के लोग गाते हैं और हमारे बड़े भाई भी गाते हैं लेकिन मै नहीं गाता हूँ |क्योंकि बचपन से ही नहीं सीख पाया शायद इसमें मेरी रूचि नहीं रही सुनता रहा पर सीख नहीं पाया | इस बात का मुझे कष्ट होता है जब समाज में चार लोंगो के बीच बैठता हूँ|

सवाल- आप ने काहा की इस बात का मुझे कष्ट होता है जब समाज में बैठता हूँ कि मै अपनी पारम्परिक गायकी नहीं सीख पाया तो आपको क्या लगता है की आपको अपने बच्चो को सिखाना चाहिए इसे, उन्हें परम्परा और कला के महत्त्व से वाकिफ कराना चाहिए ? क्या इसके लिए आप कुछ अपने स्तर पर या परम्परा के स्तर पर कर रहे हैं जिससे की आगे आने वाली पीढी भी परम्परा को और आगे आने वाली पीढी को सौंप सके ?

ज़वाब- जी हम लोग तो भूल ही चुके थे लेकिन जब से बाहर जाकर देखा की परम्परा के संरक्षण के लिए सरकार और लोग काम कर रहे हैं तो हमारी भी अपने परम्परा के प्रति प्रीति उपजी है | अब क्या बताएं आप से अब तो लगता है की आप हमको जंहा ले चले वंहा चलने के लिए तैयार हैं और तो और हम अपने बच्चो

को यही बताते हैं की कुछ भी करो लेकिन समय निकाल कर समाज में बैठा करो और शांतिपूर्ण जीवन पाने के लिए सम्मान पूर्वक जीवन का निर्वहन करने के लिए इसे भी सीखो | और बच्चे सीख रहे हैं बिलकुल छोटे बच्चे इसमें पागलो की तरह लगे हैं और मैं रोकता भी नहीं क्योंकि इनकी यही उम्र है रूचि की यही बनी रही तो ये कभी भी सीख जायेंगे | वरना मेरी तरह पछताते रहेंगे |

उपसंहार -: बघेलखण्ड में निवासरत तमाम जाति एवं जनजातियों की कथा एवं गीत गायन परम्परा और उनके वृहद् रूप को 2 वर्ष के रिसर्च प्रतिवेदन के साथ प्रस्तुत कर पाना थोड़ा मुस्किल काम है लेकिन सीधी के परिदृश्य में इसको प्रस्तुत कर रहा हूँ | भारतीय विंध्य वसुंधरा की रम्यभूमि सिद्धि (सीधी) का इतिहास सदा से महान परम्पराओं के लिए जाना जाता रहा है | सघन वनों से घिरा सीधी प्राचीन काल से ऋषि-मुनियों की शिक्षा-दीक्षा, तपस्या, दान, आश्रय और ईष्ट आराधना का केंद्र रहा है | कृष्ण मृग और सफेद शेर की अनुकूलन वाली इस पावन भूमि का प्राकृतिक सौन्दर्य हमेशा से ही महान आत्माओं को अपनी ओर आकर्षित करता रहा | बाणभट्ट और बीरबल जैसे महापुरुषों की जीवन साधना और कर्मप्रधानता ने इसे सिद्धि का परिचायक बनाया | सीधी रामायण एवं महाभारत काल का कारुष जनपद पुराणों में हिरण्यवाह (शोणभद्र) नदी के घाटों वाला क्षेत्र हुआ करता था | सोनान्च्ल के लोकजीवन में शोणभद्र और नर्मदा की प्रेम कथा अबाध धार की भांति आज भी लाखों कंठों में प्रवाहमान है | सिद्धि आज भी अपनी पौराणिक दण्डकरण्य वाली छवि के दायरे में प्रदेश के सबसे सुंदर और प्राकृतिक सम्पदाओं से समृद्ध क्षेत्रों में से एक है | विंध्य-मेकल पर्वत श्रृंखलाओ एवं वनस्पतियों से आच्छादित यह धरती आज भी वन्यजीवों और अपनी वनवासी संस्कृति की समरसता को अक्षुण्य बनाये रखने में सफल है | महाकवि बाणभट्ट ने हर्षचरितं में सोन, गोपद और बाणगंगा के संगम वाले स्थान भ्रमरशैल को अपनी तपभूमि के रूप में बताया है | यहीं पास ही चंद्रेह में सातवीं शताब्दी का शिवमन्दिर है जो सीधी के ऐतिहासिक और धार्मिक दृष्टि से बड़ा महत्व रखता है | सीधी जनपद प्राचीन काल से ही शैव, शाक्त, वैष्णव, बौद्ध और सौर साम्प्रदायों की साधना भूमि रही है और यहाँ बौद्ध एवं सती स्तूप काफी संख्या में आज भी विद्यमान हैं | वहीं गुप्तकालीन मूर्तियाँ एवं गुहायें भी सीधी के अलग-अलग क्षेत्रों में देखने को मिलती हैं | कहा जाता है कि सम्राट अशोक ने कलिंग के लिए इसी सोननद मार्ग का चयन किया था | तब उस काल में यही प्रमुख व्यापार मार्ग भी हुआ करता था | यहाँ अब तक के किये गए अन्वेषण में पाषाणयुगीन औज़ार एवं सोन नदी के दोनों पाटों पर प्रागैतिहासिक काल के पाए गए जीवाश्मों से यह सिद्ध होता है कि कभी इस भूमि पर भारी संख्या में मानव बसाहट थी | वहीं नरकुई नदी के दोनों किनारों पर मध्यपषाण कालीन औज़ार भी मिले हैं | नरकुई उद्गम स्थल पर आज भी कैमोर शैल पर मानव रक्तिम पंजा और गुहायें मौज़ूद हैं जो यहाँ मानव सभ्यता के उत्थान और पतन की कथा कहती हैं | किवंदंतियों में नरकुई नदी को पौराणिक असुर भूमिपुत्र नरका के रक्त से निकली होने के कारण अस्पृश्य मानते हैं | कैमोर को राक्षस मुर और मोरबा को उसकी बहन मौरवी के निवास स्थान के भी रूप में जाना जाता है |

'लोक' और 'लोकजीवन' ऐसी प्रवाहमान धारा है जो कभी नष्ट नही होती | यह नये-नये रूपों में समय, परिवेश, पर्यावरण के बीच से गतिमान होती रहती है | गीता में कथन है– "अतोऽस्मिन लोके वेदे च प्रथितः

पुरषोत्तमः |” लोक केवल ग्रामीण जीवन नही बल्कि पूरी क़ायनात का परिचायक है | सीधी जिला सदा से ही लोक संस्कृति संपन्न क्षेत्र रहा है | यहाँ निवासरत तमाम जातियां अपने संस्कारों और प्रदर्शनकारी कलारूपों के जरिये सामाजिक समरसता बनाये रखने में सफल रही हैं | जन्म से लेकर मृत्यु तक उत्सव धर्मिता की इस पावन भूमि पर 12 संस्कारों के असंख्य गीतों के साथ-साथ ऋतु, श्रम, यात्रा आदि की मजबूत परम्परा है | गाथा गायन परम्परा में चंदैनी, छाहुर, ललना, चंदनुआ, पदुम-कंधइया, गढ़ केउंटी, रेवा-परेवा, भरथरी, राजा हरिश्चन्द्र, आल्हा, ढोला म्हारू, बसामन मामा, कोहरौहीं, बसदेवा आदि हैं | सीधी के लोक नृत्यों में करमा, शैला, गुदुम्ब-बाजा, अहिराई, अहिराई-लाठी, केहरा, सजनई, जेड़ी, कोलदहका, मटकी, सुआ-छपैया, चमरौही, धोबिआई, काली नृत्य, बरिहौंही, लिल्ली घोड़ी नृत्य, अगुआनी, लागा, कलशा आदि हैं | यहाँ महाकवि घाघ जैसे कृषि वैज्ञानिकों के कहावतों की विशाल परम्परा भी प्रवाहमान है | सीधी शिल्पकला के क्षेत्र में भी प्रदेश के अन्य जिलों से कहीं पीछे नही ठहरता यहाँ बांस शिल्प, काष्ठ शिल्प, पत्थर शिल्प, लौह शिल्प, मिट्टी शिल्प के बहुतायत कलाकार है तो वहीं सीधी के गाँव-गाँव में चित्रकला व अंग अंकन (गोदना) के कलाकार आज भी अपनी परम्परा को गति प्रदान कर रहे हैं |

{ कोहरौहीं गाथा का द्वितीय खण्ड का प्रस्तुतीकरण संपन्न }

नरेंद्र बहादुर सिंह
शोधकर्ता

पत्रिका, सतना, रविवार, 17 मार्च, 2019
patrika.com

महाउर फाग महोत्सव, खड्डी में हुई प्रस्तुति

पत्रिका न्यूज़ नेटवर्क
patrika.com

सीधी. इंद्रवती नाट्य समिति द्वारा आयोजित 11 दिवसीय महाउर फाग महोत्सव के छठवें दिन इंद्रवती लोकला ग्राम खड्डी में प्रस्तुति दी गई। कलाकारों ने यहां फाग का शानदार गायन किया। फगुआ महोत्सव की परंपरा में शामिल सनातन संस्कृति के संरक्षण संवर्धन के साथ विभिन्न कलाग्रामों में आयोजित कार्यक्रम के उत्कृष्ट प्रस्तुति से लोक कलाकार होली मिलन और फाग गीत के साथ इंद्रवती नाट्य समिति के अनुकरणीय प्रयास से अविभूत हैं।

लोककला ग्राम खड्डी में फाग महोत्सव के छठवें दिन की प्रस्तुति पर रजनीश जायसवाल, प्रजीत साकेत, संतोष द्विवेदी की उपस्थिति मे फाग दल ने अद्भुत प्रस्तुति दी। कार्यक्रम का संचालन सतेंद्र सिंह ने किया, संयोजन निर्भय द्विवेदी का रहा। कार्यक्रम में शामिल संरक्षक राम प्रकाश द्विवेदी, लालकुमार सिंह, दिनेश विश्वकर्मा, छोटकामन पनिका, मातादीन तिवारी, गणेश शर्मा, बुद्धसेन कोल, अर्जुन कोल, बिहारी केवट, संतोष यादव, श्यामसुंदर सेन, राजकुमार केवट, अमित तिवारी, कृष्णकुमार परौहा, रामराज गौतम, आदित्य द्विवेदी, दिनपत यादव, लालजी बैस, रामदयाल यादव, ललवा कोल आदि कलाकारों ने उत्कृष्ट प्रस्तुति से अविभूत किया। शुभम् पाण्डेय, अंकित जायसवाल के सक्रिय सहयोग से लोक महोत्सव सम्पन्न हुआ।

पत्रिका . सतना, गुरुवार, 14 मार्च, 2019
patrika.com

महाउर फाग महोत्सव: परासी गांव में हुआ फाग महोत्सव

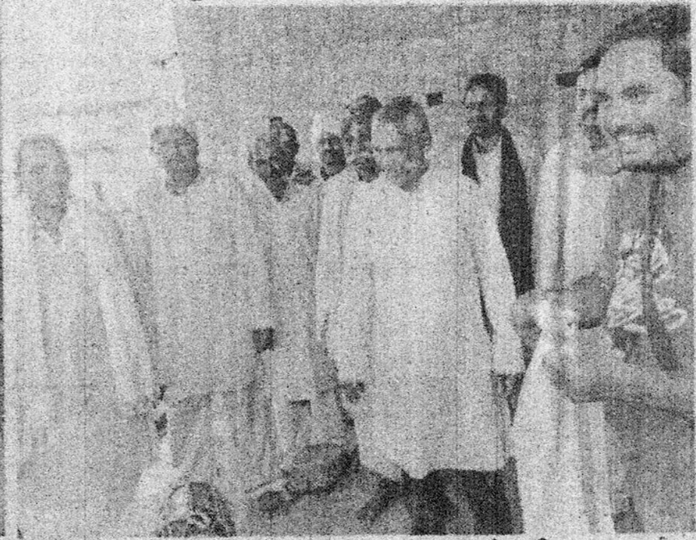

पत्रिका न्यूज़ नेटवर्क
patrika.com

सीधी. इंद्रवती नाट्य समिति द्वारा आयोजित 11 दिवसीय फाग महोत्सव के तीसरे दिन की प्रस्तुति बुधवार को मझौली विकासखंड के इंद्रवती लोककला गांव परासी गांव में हुई। महोत्सव के तहत लोक कला ग्राम परासी में फाग गीत और होली मिलन का आयोजन किया गया, जिसमे नीरज कुंदेर के उपस्थिति में सभी कलाकारो का सम्मान अंगवस्त्र दे कर किया गया। इस अवसर पर मुख्य रुप से रोशनी प्रसाद मिश्रा, रजनीश जायसवाल ने कलाकारो का सम्मान कर सारगर्भित विचार रखे। फाग महोत्सव में शामिल कलाकारो ने आभार व्यक्त कर कार्यक्रम का समापन किया, जिसमे हरिहर प्रसाद मिश्रा, अमृत लाल केवट, रामखेलावन केवट, रामखेलावन साकेत, ददुली केवट, रामवक्श साकेत, गंगा केवट, दद्दा केवट, रामेश्वर साकेत, रामरतन साकेत, जगदीश साकेत, रामप्रसाद केवट, महादेव केवट, मनवहोर साकेत, लाले केवट आदि कलाकारो की सहभागिता से होली मिलन का वृहद आयोजन किया गया। कार्यक्रम का संचालन राकेश कुमार मिश्रा एवं संयोजन संतोष कुमार मिश्रा द्वारा किया गया। रुपेश कुमार मिश्रा की सक्रिय भूमिका से क्षेत्रीय कलाकारों की सहभागिता में कार्यक्रम सफलता पूर्वक संपन्न हुआ।

पत्रिका . सतना, गुरुवार, 14 मार्च, 2019
patrika.com

महाउर फाग महोत्सव: परासी गांव में हुआ फाग महोत्सव

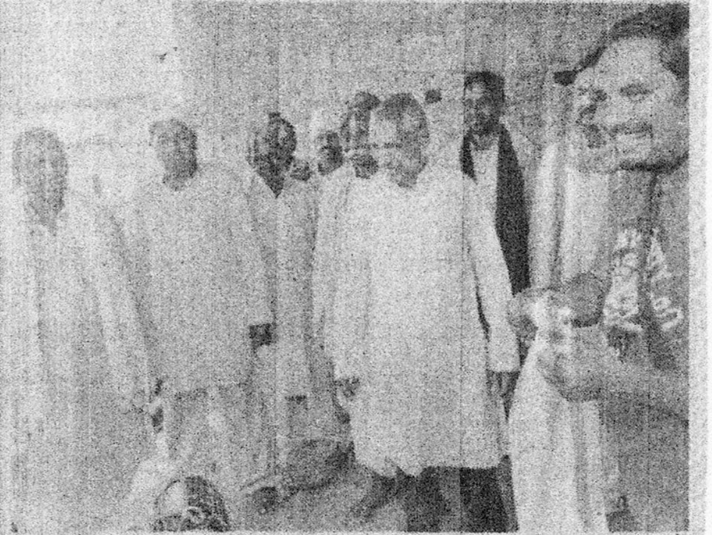

पत्रिका न्यूज़ नेटवर्क
patrika.com

सीधी. इंद्रवती नाट्य समिति द्वारा आयोजित 11 दिवसीय फाग महोत्सव के तीसरे दिन की प्रस्तुति बुधवार को मझौली विकासखंड के इंद्रवती लोककला गांव परासी गांव में हुई। महोत्सव के तहत लोक कला ग्राम परासी में फाग गीत और होली मिलन का आयोजन किया गया, जिसमे नीरज कुंदेर के उपस्थिति में सभी कलाकारो का सम्मान अंगवस्त्र दे कर किया गया। इस अवसर पर मुख्य रुप से रोशनी प्रसाद मिश्रा, रजनीश जायसवाल ने कलाकारो का सम्मान कर सारगर्भित विचार रखे। फाग महोत्सव में शामिल कलाकारो ने आभार व्यक्त कर कार्यक्रम का समापन किया, जिसमे हरिहर प्रसाद मिश्रा, अमृत लाल केवट, रामखेलावन केवट, रामखेलावन साकेत, ददुली केवट, रामवक्श साकेत, गंगा केवट, दद्दा केवट, रामेश्वर साकेत, रामरतन साकेत, जगदीश साकेत, रामप्रसाद केवट, महादेव केवट, मनवहोर साकेत, लाले केवट आदि कलाकारो की सहभागिता से होली मिलन का वृहद आयोजन किया गया। कार्यक्रम का संचालन राकेश कुमार मिश्रा एवं संयोजन संतोष कुमार मिश्रा द्वारा किया गया। रुपेश कुमार मिश्रा की सक्रिय भूमिका से क्षेत्रीय कलाकारों की सहभागिता में कार्यक्रम सफलता पूर्वक संपत्र हुआ।

पत्रिका . सतना, बुधवार, 10 अप्रेल, 2019
patrika.com

महाउर जवारा महोत्सव

लोककलाकारों ने भमरहा में दी भगत की प्रस्तुति

सीधी@पत्रिका. इंद्रवती नाट्य समिति ने चैत्र नवरात्र पर नौ दिवसीय जवारा महोत्व आयोजित किया है। समिति के रोशनी प्रसाद मिश्रा, नीरज कुंदेर व नरेंद्र बहादुर सिंह के मार्गदर्शन में लोक कलाकार प्रस्तुतियां दे रहे हैं। रविवार शाम 5 बजे से रात 9 बजे तक भमरहा में भगत की प्रस्तुति हुई। प्रजीत साकेत ने संचालन किया। रामदास साकेत, राजबली साकेत, महाबली साकेत, सूर्यबली साकेत, रमेश साकेत, ब्रिजेश साकेत, मुकेश साकेत, रोहित साकेत, रघुपति साकेत, कैलाश साकेत, रामलाल साकेत, रामअवतार साकेत ने प्रस्तुतियां दी।

तैयार जवारा तथा महोत्सव में प्रस्तुति देते कलाकार।

दैनिक जागरण रीवा, 11 अप्रैल 2019 www.jagranmp.com/epaper

सीधी जागरण

खड्डी में महाउर जवारा महोत्सव की चौथे दिन हुई प्रस्तुति

इन्द्रवती लोक कला ग्राम खड्डी में कलाकारों ने बांधा समां

जागरण, सीधी। इन्द्रवती नाट्य समिति सीधी के लोक कला ग्राम खड्डी में महाउर जवारा महोत्सव के चौथे दिन की प्रस्तुति कलाकारों ने देते हुये शमा बांध दिया। अनवरत कला और साहित्य के साथ विभिन्न आयोजन से लोक संस्कृति के संरक्षण संवर्धन में सक्रिय भूमिका व्दारा इन्द्रवती नाट्य समिति का 9 दिवसीय महाउर जवारा महोत्सव के चौथे दिन लोककला ग्राम खड्डी में भगत गीत और परम्परा गत देवी गीत की प्रस्तुति लोक कलाकारो के समूही व्दारा दी गयी। जिसमे शिवधारी कोल, खेलावन केवट, दिनेश विश्वकर्मा, मुकेश केवट, स्वकर्म पनिका, भैया कोल, श्यामसुन्दर नापित, ललवा कोल, रामनिहोर पनिका, कल्लू कोल, कौशल कोल, अर्जुन पनिका, मुण्डे कोल, बुध्दा कोल, अर्जुन कोल, भाईलाल कोल, लक्ष्मण कोल, मोहन कोल, धुइलहा नापित, राजकुमार केवट, हिछलाल कोल, बाबूलाल कोल, रामचरण कोल, सुआधीन कोल, दादू कोल आदि कलाकारो की सहभागिता से शहीद ताम्रध्वंज सिंह सेवा समिति खड्डी के तत्वावधान में आयोजित किया गया। संचालन सतेन्द सिंह व्दारा एंव निर्भय व्दिवेदी, सागर व्दिवेदी के सहयोग से रोशनी प्रसाद मिश्रा की परिकल्पना में नीरज कुन्देर के प्रबंधन से नरेंद्र बहादुर सिंह के समन्वयन से अनवरत मंचीय प्रस्तुतीकरण के माध्यम से 10 अप्रैल को इन्द्रवती लोककला ग्राम करही में रंगपटल परफार्मिंग आर्ट सोसायटी सीधी व्दारा बडा देव चौरा करही में आयोजित किया जावेगा।

नवभारत सतना , बुधवार 20 मार्च , 2019

महाउर फाग महोत्सव का हुआ करमाई में आयोजन

नवभारत न्यूज

सीधी 19 मार्च। 11 दिवसीय महाउर फाग महोत्सव का आयोजन इन्द्रवती नाट्य समिति के अनुकरणीय प्रयास से अनवरत लोक कला ग्राम मे सम्पन्न हो रहा है।

जिसमे आज की प्रस्तुति लोककला ग्राम करमाई में रोशनी प्रसाद मिश्रा, नरेन्द्र बहादुर सिंह, प्रजीत साकेत, निर्भय द्विवेदी, अंकित जायसवाल की उपस्थिति में उत्कृष्ट फगुआ गीत रामसखा बैस, जगभान यादव, बुधसेन यादव, विनोद तिवारी, रामचरन यादव, लालमन यादव, रामानुज बैगा, रामशरण बैगा, शिवरतन कोल, मोहन नापित, विक्कू यादव, बलदाऊ यादव, सतीश बघेल द्वारा ग्रामवासियों के सौजन्य से सम्पन्न कार्यक्रम का संचालन सतेन्द्र सिंह और संयोजन रजनीश जायसवाल का रहा। होली मिलन के वृहद आयोजन से कला संस्कृति और परम्परा के संरक्षण संवर्धन में सक्रिय महाउर रंग अनुष्ठान की उत्कृष्ट पहल है। 10वें दिन की प्रस्तुति 20 मार्च को 2 बजे से डॉ.राजेश मिश्रा के निवास स्थल पर, शाम 4 बजे विधायक सीधी के निवास स्थल कमल कुटी कोटहा व शाम 7 बजे संकटमोचन आश्रम गोपालदास बांध के पास होना सुनिश्चित हुआ है।